चन्दामामा
सितंबर १९९६

CHANDAMAMA

It unfolds the glory of India—both past and present—through stories, month after month.

Spread over 64 pages teeming with colourful illustrations, the magazine presents an exciting selection of tales from mythology, legends, historical episodes, glimpses of great lives, creative stories of today and knowledge that matters.

In 11 languages and in Sanskrit too.

Address your subscription enquiries to:

DOLTON AGENCIES 188 N.S.K. ROAD MADRAS-600 026

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कामिक्स
डायमण्ड कामिक्स
प्राण
पिंकी का बगीचा
प्राण
रमन और पोस्टमैन
महाबली शाका और यमकाल
प्राण
चाचा चौधरी ढोकियो में
प्राण
चाचा चौधरी और देहरादून एक्सप्रेस
मोटू छोटू और क्रिकेट मैच
ताऊजी और तांत्रिक जंग्सा
जेम्स बाण्ड-48
राजन इकबाल और कड़कड़ूमा
डायमण्ड कामिक्स डाइजेस्ट
फैण्टम-58
मैण्ड्रेक-45
नई अमर चित्रकथायें
अंगुलिमाल
शची और इन्द्र
वाल्मीकि
द्रोण
तेनाली रामन
राजीव गांधी
जातक कथाएं
जातक कथाएं
विनोदप्रिय बीरबल
कबीर
पंचतंत्र
अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनें और बचायें रु: 200/- वार्षिक
अंकुर बाल बुक क्लब घर बैठे डायमण्ड कामिक्स पाने का सबसे सरल तरीका है। आप गांव में हैं या ऐसी जगह जहाँ डायमण्ड कॉमिक्स नहीं पहुंच पाते। डाक द्वारा वी.पी.पी. से हर माह डायमण्ड कॉमिक्स के 6 नये कॉमिक्स पाये और मनोरंजन की दुनिया में खो जाये साथ ही ढेरों इनाम पायें।
हर माह छः कॉमिक्स (48/-रु. की) एक साथ मंगवाने पर 4/- रुपये की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री (लगभग 7/-) लगातार 12 वी.पी. छुड़ाने पर 13वीं वी.पी. फ्री।
1 वर्ष में महीने — बचत (रु.) — कुल बचत (रु.)
12 — 4/- (छूट) — 48.00
12 — 7/- (डाक व्यय) — 84.00
1 — 48/- (13वीं वी.पी. फ्री) — 48.00
सदस्यता प्रमाण पत्र व अन्य आकर्षक 'उपहार', स्टिकर और 'डायमण्ड पुस्तक समाचार' फ्री — 20.00
200.00
सदस्य बनने के लिए आप केवल संलग्न कूपन को भरकर भेजें और सदस्यता शुल्क के 10 रु. डाक टिकट या मनीआर्डर के रूप में अवश्य भेजें। इस योजना के अन्तर्गत हर माह 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी जिसमें छः कॉमिक्स होगी।
हाँ! मैं "अंकुर बाल बुक क्लब" का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं और आपके द्वारा दी गई सुविधाओं को प्राप्त करना चाहता/चाहती हूं। मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।
नाम
पता
डाक
जिला
पिनकोड
सदस्यता शुल्क 10 रु. डाक टिकट/मनीआर्डर से भेज रहा/रही हूं।
मेरा जन्म दिन
नोट : सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
डायमण्ड राशिफल 1997 12 राशियां अलग-अलग पुस्तकों में (मूल्य प्रत्येक राशि 10/-)
डायमण्ड कामिक्स 'दिल्ली बुक फेयर' प्रगति मैदान 10 अगस्त से 18 अगस्त 1996 में आपका स्वागत करता है।
डायमण्ड कामिक्स प्रा. लि. X-30, ओखला इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज-2, नई दिल्ली-110020
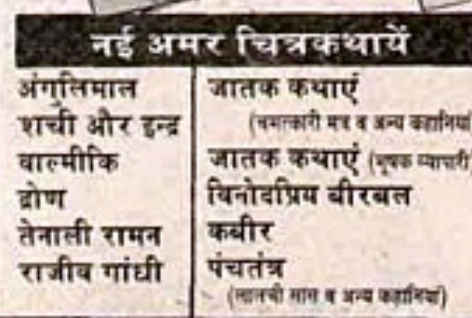
चन्दामामा

सितम्बर १९९६

एक प्रति : ६.००

वार्षिक चन्दा : ७२.००

JUST RELEASED

The first set of **Chandamama Books,** splendid in their content, illustrations, and production, is now ready.
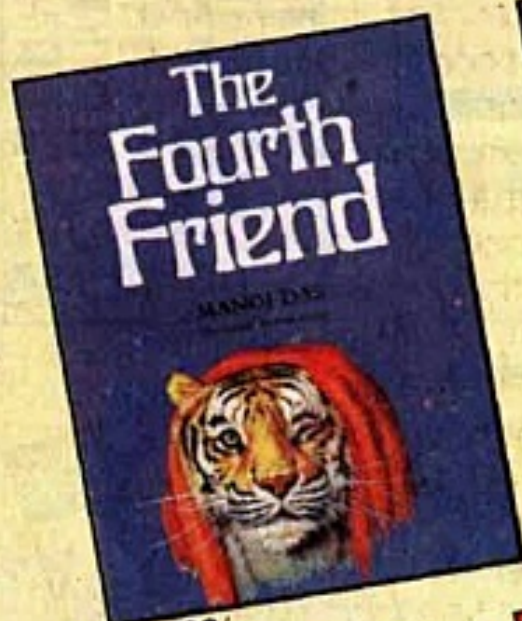
Rs. 40/-
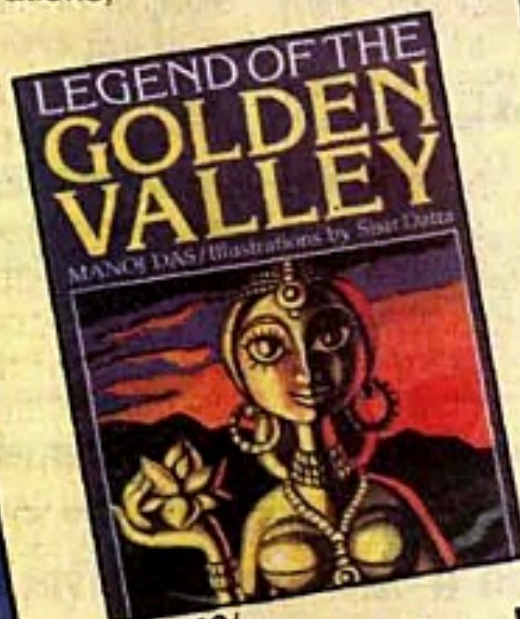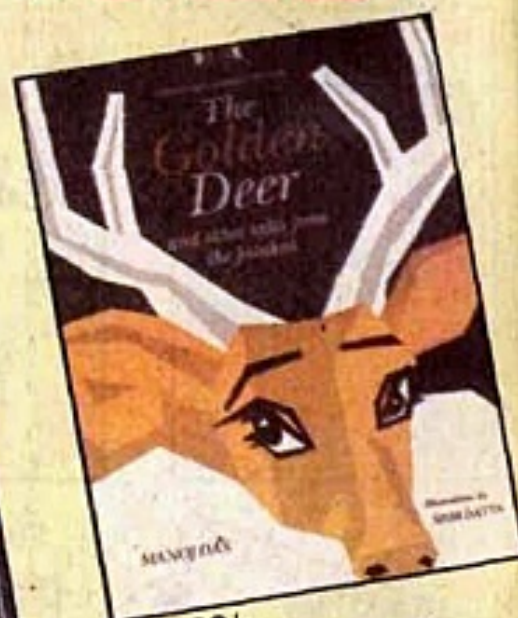
The Golden Deer

Rs. 30/-

Rs. 30/-

Rs. 25/-

A STRANGE PROPHECY AND OTHER TALES FROM THE JATAKAS

MANOJ DAS
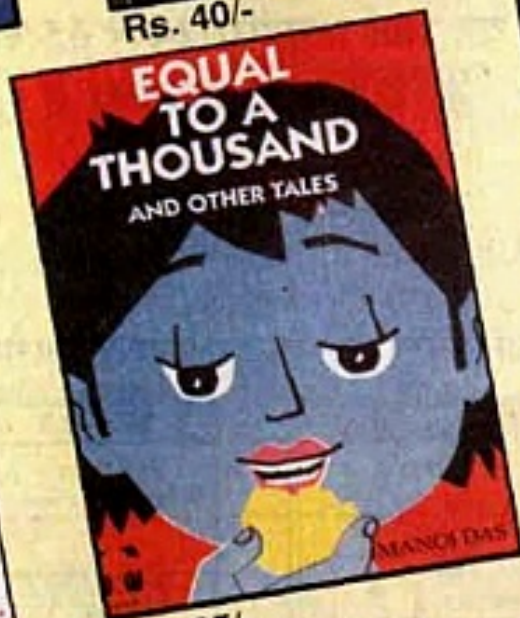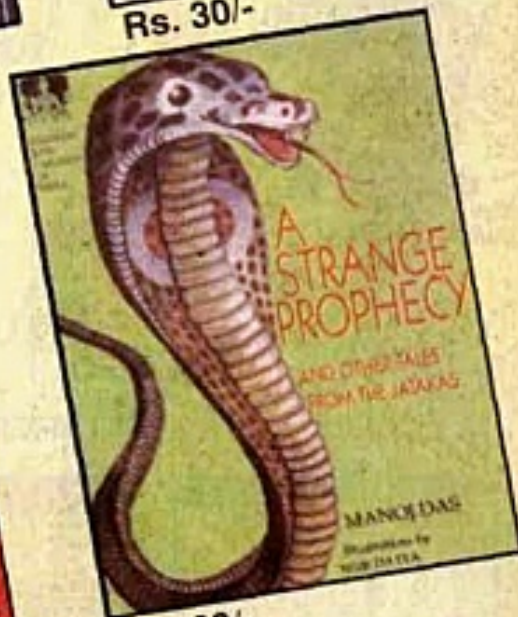
Rs. 30/-

For details, write to :

CHANDAMAMA BOOKS
Chandamama Bldgs.
Vadapalani, Madras - 600 026.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

बचपन की रक्षा

जून में लगभग १८० देशों के श्रम मंत्रियों की एक सभा जेनेवा में संपन्न हुई। उन्होंने निर्णय लिया कि बच्चों का शोषण याने बच्चों से मज़दूरी कराने की पद्धति पर पाबंदी लगायी जाए। हमें शायद आश्चर्य होगा कि वे ऐसा क़दम उठाने पर क्यों बाध्य हुए? अंतर्राष्ट्रीय श्रम संस्था ने उनके सामने तत्संबंधी आँकड़े प्रस्तुत किये। दस और चौदह साल के ७३,०००,००० बालक-बालिकाएँ एशिया (भारत, इंडोनेशिया) और अफ्रीका (घाना, सेनेगल) में १९९५ में मज़दूरी कर रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संस्था का यह केवल अंदाज़ा मात्र है। असली संख्या तो इससे भी बहुत ही ज़्यादा भी हो सकती है।

इस संस्था के सर्वेक्षण के अनुसार मज़दूरी करते हुए ये बच्चे अपने पारिश्रामिक का पच्चीसवाँ प्रतिशत अपने माता-पिता को अथवा अपने संरक्षकों को दे रहे हैं, जिनके यहाँ वे पल रहे हैं। इससे यह स्पष्ट है कि आर्थिक दशा उन्हें ऐसा करने से मजबूर कर रही है। ऐसा करने पर ही उनके परिवारों की आर्थिक आवश्यकताएँ पूर्ण हो सकेंगी। हमें देखना है कि संसार के ये देश इस भयंकर समस्या का परिष्कार कैसे ढूंढ पायेंगे।

इस बीच भारतीय उद्योगपतियों ने इस दिशा में ठोस क़दम उठाया, जो सराहनीय है। जहाँ-जहाँ ज़्यादा से ज़्यादा बच्चे काम पर जाते हैं, उनके परिवारों की आमदनी को बढ़ाने का निश्चय इन्होंने किया, जिससे बच्चों को मज़दूरी करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी और वे पढ़-लिख पायेंगे।

'फेडरेशन आफ इंडियन चांबर्स आफ कामर्स एण्ड इंडस्ट्री' के अध्यक्ष ने हाल ही में मद्रास में बताया कि आर्थिक क्षेत्र में पिछड़ी औरतों को नौकरी दिलाना उनका तत्काल लक्ष्य होगा। यह सचमुच ही सराहनीय प्रयत्न है।

टी.वी. के व्यावसायिक विज्ञापन बार-बार दुहराएँ कि बच्चे अपने बचपन का सुखद अनुभव करें, क्योंकि बचपन जीवन में एक ही बार आता है।

वर्ष : ५० सितंबर १९९६ अंक : १

एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

समाचार-विशेषताएँ
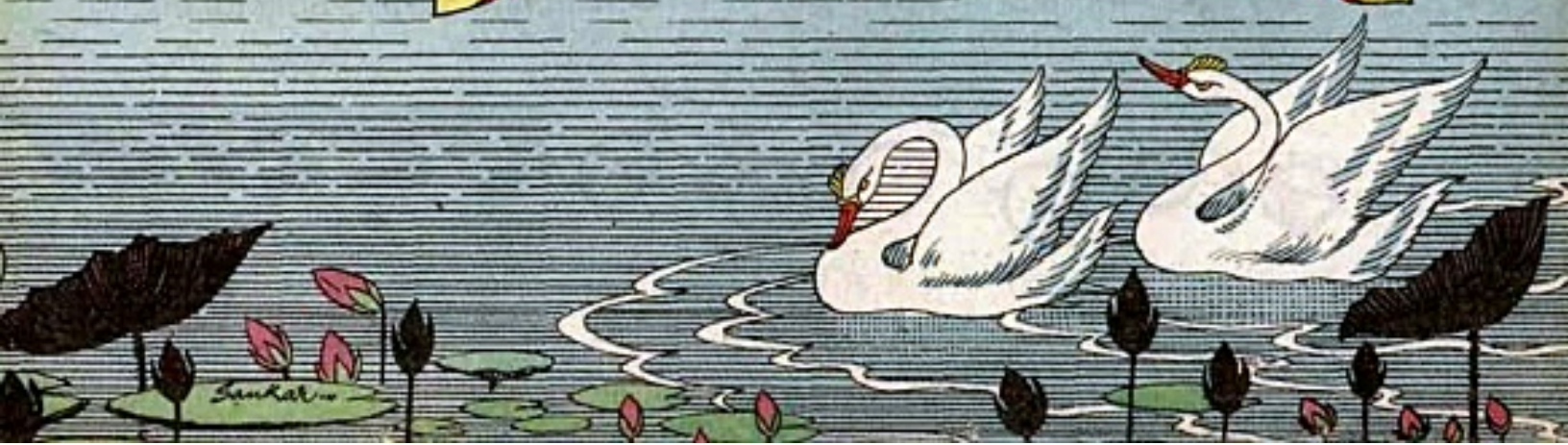
द्वितीय महिला प्रधान मंत्री

बंगला देश हमारा पड़ोसी देश है। इस देश की प्रथम महिला प्रधान मंत्री थीं बेगम खलिदा जिया। १९९१ से १९९६ तक इन्होंने शासन-भार संभाला। फ़रवरी में संपन्न आम चुनावों में जीतकर पुन: प्रधान मंत्री बनीं। किन्तु इन चुनावों का बहिष्कार विपक्ष दलों ने किया। अत: उन्हें इस्तीफ़ा देने के लिए देश भर में बड़े पैमाने पर आंदोलन हुआ। फलस्वरूप उन्होंने इस्तीफ़ा दे दिया। जून १२ को फिर से चुनाव हुए। षेक हसीना के नेतृत्व में संकीर्ण सरकार बनी। षेक हसीना वाजेद बंगला देश की द्वितीय महिला प्रधान मंत्री बनीं।

बंगला देश के राष्ट्रपिता के नाम से प्रख्यात षेक मुजिबुर रहमान की बड़ी बेटी हैं षेक हसीना। मुजिबुर रहमान ने अवामीलीग दल का नेतृत्व संभाला और पूरबी पाकिस्तान की स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी। पाकिस्तान की राजधानी थी इस्लामाबाद। पाकिस्तान के ख़िलाफ आंदोलन ने तीव्र रूप धारण किया। तब हज़ारों लोग शरणार्थी बनकर हमारे देश में आने लगे। उन्हें स्वस्थल लौटाने के लिए भारत को पाकिस्तान के मामलों में दखल देना पड़ा। १९७१ में भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध हुआ। इसके बाद पूरबी पाकिस्तान स्वतंत्र हुआ। नया देश बना, जिसका नाम है-बंगला देश।

१९७२ में मुजिबुर रहमान बंगला देश के अध्यक्ष बने। १९७५ अगस्त, तारीख पंद्रह को राजधानी ढाका में परिवार सहित मुजिबर रहमान की हत्या की गयी। उस समय उनकी बड़ी बेटी षेक हसीना जर्मनी में थीं, जिससे वे बच गयीं।

१९७७ में बंगला देश फिर से संक्षोभ का शिकार बना। जनरल जिया उर रहमान अध्यक्ष हुए। १९८१ में उनकी भी हत्या कर दी गयी। १९८२ में गदर हुआ। बाद लेफ़्टेनेंट जनरल हुसेन महम्मद एरषाद अध्यक्ष बने और सेना के शासन की घोषणा की। १९८६ में सेना की हुकूमत हटा दी गयी और आम चुनाव हुए। एरषाद का 'जातीय दल' जीता। किन्तु जीत विवादास्पद बनी। फिर भी वे १९९१ तक सत्तारूढ़ रहे। १९९१ में जो आम चुनाव हुए, उनमें जिया उर रहमान की विधवा बेगम खलीदा जिया के नतृत्व में, 'बंगला देश नेशनलिस्ट पार्टी' ने अधिकार हस्तगत किया। रिश्वतखोरी के जुर्म में जनरल एरषाद क़ैद कर लिये गये।

मुजिबुर रहमान की बड़ी बेटी षेक हसीना १९८१ में स्वदेशी लौटीं। 'अवामीलीग पार्टी' का नेतृत्व संभाला। बंगलादेश के संसद में 'अवामीलीग' था विपक्ष दल।

जून १२ को जो चुनाव हुए, उसमें 'अवामी लीग' को अधिक स्थान (१४६) मिले। 'बंगला देश नेशनलिस्ट पार्टी' को ११६ स्थान प्राप्त हुए। 'जातीय पार्टी' को तीस स्थान ही मिले। संसद के कुल स्थान हैं - ३००। 'अवामी लीग' को सरकार बनाने के लिए बहुमत नहीं था, इसलिए अन्य दलों का समर्थन पाकर उसने संकीर्ण सरकार बनायी। जनरल एरषाद ने जेल में रहते हुए नयी सरकार के समर्थन की घोषणा की। षेक हसीना ने २५ सांसदों को अपने मंत्रिमंडल में लिया। दूसरी प्रधान मंत्री की जिम्मेदारियों को संभालते हुए उन्होंने संसद में कहा "यद्यपि यह संकीर्ण सरकार है, फिर भी मुख्य समस्याओं के परिष्कार का मार्ग ढूँढेगी और इसके लिए सबके अभिप्रायों का स्वागत करेगी।"

पति शहर का - पत्नी गाँव की

कमलाकर के माता-पिता उसके बचपन से ही गुज़र गये। उसकी दादी ने ही उसे पाला-पोसा और बड़ा किया। उसने ऊँची शिक्षा प्राप्त की और इधर चार सालों से शहर में नौकरी कर रहा है। दादी उसके साथ शहर नहीं गयी, क्योंकि उसे गाँव ही पसंद है, जहाँ उसकी सारी ज़िन्दगी गुज़री। वह अकेली ही वहाँ रहने लगी। उसी गाँव में कमलाकर की दीदी भी रहती है, जो अपनी दादी की देखभाल करती रहती है।

एक दिन कमलाकर को ख़बर मिली कि दादी की तबीयत बिल्कुल ही ख़राब है और वह चंद दिनों की मेहमान है। कमलाकर के आने की ख़बर सुनकर दादी ने आँखें खोलीं और कहा "तुम्हारी शादी देखे बिना मैं मरूँगी नहीं। कमलाकर, दो सालों से पूछती आ रही हूँ कि शादी करो। किन्तु तुम टालते ही आ रहे हो। मेरी इच्छा पूरी नहीं की।" वह रोती हुई बोली।

कमलाकर को गाँव की लड़की से शादी करना पसंद नहीं। किसी भी हालत में वह करना भी नहीं चाहता। सुंदर, सुकोमल, होशियार लड़की से ही शादी रचाने के सपने देखा करता। उसका विश्वास है कि ऐसी लड़की शहर की ही हो सकती है।

"दादी, पहले तुम्हारी तबीयत ठीक हो जाने दो। इस श्रावण मास में ही शादी कर लूँगा।" कमलाकर ने दादी के पैरों को दबाते हुए कहा। "मेरी तबीयत भला क्योंकर ठीक होगी। भगवान से बुलावा आ गया है। तुम्हारी शादी हो जाए तो तृप्ति से आँख मूँद लूँगी। कल ही अच्छा मुहूर्त भी है। कमला से शादी कर लो।"

कमला पड़ोसी की इकलौती बेटी है। चूँकि दादी अकेली है, लंबे अर्से से वह दादी की देखभाल करती आ रही है।

लक्ष्मी कामत

कमलाकर को दादी का यह प्रस्ताव क़तई पसंद नहीं। वह कुछ कहने ही वाला था, उसकी दीदी ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा "कमला हर तरह से तुम्हारे लिए योग्य पत्नी है। वैद्य ने भी बता दिया कि दादी चार-पाँच दिनों से अधिक ज़िन्दा नहीं रहेगी। दादी ने हमारे लिए क्या कुछ नहीं किया। उसका ऋण चुकाना क्या हमारा कर्तव्य नहीं? उसकी इस अंतिम दशा में उसका दिल दुखाना क्या ठीक है? उसकी आख़िरी ख्वाहिश को पूरा करना तुम्हारा धर्म है।"

कमलाकर इस विवाह के बिल्कुल विरुद्ध है, पर लाचार होकर उसे अपनी स्वीकृति देनी पड़ी। दादी की इच्छा के अनुसार ही दूसरे ही दिन शादी हो गयी।

इस विवाह को देखने के बाद दादी एकदम स्वस्थ हो गयी। अब उसे देखते हुए लगता नहीं कि वह कल मरण-शय्या पर थी। लगता है, मानों किसी मंत्र-शक्ति ने उसे जिला दिया।

सप्ताह के बाद कमला को लेकर कमलाकर शहर निकल पड़ा। निकलते समय दादी ने उनसे कहा "इस महीने में ही मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का दर्शन कर लो। मैं भगवान राम को वचन दे चुकी हूँ। भूलना मत। मेरी यह मनौती अवश्य पूरी करो।"

किराये की गाड़ी में जब वे शहर जा रहे हैं तब कमलाकर ने कमला को समझाया "तुम तो एकदम गँवारिन हो। शहर से गुज़रते हुए वहाँ की दुकानों, गलियों और महलों को आँखें फाड़-फाड़कर देखना मत। ऊँचा मत बोलना। ऐसा न हँसो, जिससे तुम्हारे दांत दिखें। ऐसी आदतों से दूर रहो, जिनसे तुम्हारा गँवारापन जाहिर हो।"

कमला को शहर में पारिवारिक जीवन अच्छा ही लगा। किन्तु बार-बार पति का यह कहना कि तुम गँवारिन हो, नगर की ज़िन्दगी क्या जानो, अच्छा नहीं लगा। मन ही मन वह दुखी होती।

"अपनी वेणी इतनी कसकर क्यों बाँधती हो? देवी माँ की तरह अपने माथे पर इतनी बड़ी लाल बिंदी क्यों लगाती हो? दादी की तरह क्यों साड़ी इस तरह लपेट लेती हो? नयी-नयी ब्याही हो, रंग-ढंग जानो और जीओ।" कमलाकर नाराज होते हुए कभी-कभी ऐसा कहता रहता। बीस दिनों के अंदर ही कमला शहर की लड़की की तरह अपने को सजाने-सँवारने में कामयाब हो गयी।

शहर में आकर बसे एक महीना पूरा

होनेवाला था तो कमला ने, कमलाकर को दादी की मनौती की याद दिलायी। कमलाकर ने कहा "दादी की अस्वस्थता व शादी की वजह से दस दिनों की छुट्टी ले ली। मेरे अधिकारी का नाम है, उग्रनरसिंह। जैसा नाम है, वैसा ही स्वभाव भी। उसने तो साफ़-साफ़ बता दिया कि एक दिन की भी छुट्टी नहीं दी जायेगी।"

कमला ने क्षण भर सोचकर कहा "तुम्हारे अधिकारी का नाम है, उग्रनरसिंह। तब तो उसके कुलदेवता अवश्य ही नरसिंह स्वामी होंगे। उससे छोटा-सा झूठ बोल दो कि हमारी मनौती भी उसी स्वामी को लेकर है।" उसकी सलाह ने अद्भुत रूप से काम किया।

"नरसिंह स्वामी शेष स्वामियों की तरह नहीं हैं। उनकी मनौती पूरी करने में विलंब करना नहीं चाहिये। एक दिन की छुट्टी दे रहा हूँ। कल ही चले जाना।" अधिकारी ने उत्सुकता दिखाते हुए कहा।

दूसरे दिन तड़के ही पति-पत्नी किराये की गाड़ी में रामापूर निकले। रास्ते में कमलाकर ने सोने की दो चूड़ियाँ कमला को देते हुए कहा "ये मेरी दीदी की चूड़ियाँ हैं। उसने कहा कि रामापुर के सोने की दुकानों में बिल्कुल एकदम नये ढंग की चूड़ियाँ मिलती है। इन पुरानी चूड़ियों को बदलकर नयी चूड़ियाँ ले लो। इन्हें पेटी के अंदर रख देना।"

रामापुर पहुँचते-पहुँचते दुपहर हो गयी। क़सबे में पहुँचते ही धर्मसराय है। पति-पत्नी गाड़ी से उतरे।

सराय के अधिकारी ने कह दिया कि कोई कमरा खाली नहीं है। कमलाकर निराश हो गया। किन्तु कमला ने बड़े ही आत्मीय ढंग से उस अधिकारी से कहा "रामशास्त्री जब कभी भी हमारे घर आते, कहते रहते थे कि जब कभी भी आप रामापुर आयेंगे, तब इसी सराय में ठहरियेगा।"

रामशास्त्री का नाम सुनते ही अधिकारी घबरा गया और कहा "अरे, भूल ही गया। अभी-अभी एक कमरा खाली हुआ है।" कहकर उसने फ़ौरन एक कमरा दे दिया।

कमला से कमलाकर ने पूछा "ये रामशास्त्री कौन हैं?"

"यह सराय अपने पिता के संस्मरणार्थ पिछले ही साल उन्हीं ने बनवायी थी।" कमला ने कहा।

"तुम उन्हें कैसे जानती हो?" कमलाकर ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

"अंदर आने के पहले दीवार पर टंगा तख्ता पढ़ा।" कमला ने हँसते हुए कहा।

कमलाकर उसकी होशियारी पर चकित रह गया। जल्दी-जल्दी नहा-धोने के बाद वे मंदिर पहुँचे। तभी पुजारी मंदिर के दरवाजे बंद कर रहा था। उसने इन्हें देखते हुए कहा "भगवान का दर्शन संध्या को ही हो पायेगा।"

कमलाकर ने निरुत्साह-भरे स्वर में पत्नी से कहा "मुझे तो एक ही दिन की छुट्टी मिली है। अब हम क्या करें?"

"अब कर भी क्या सकते हैं। भगवान के दर्शन का भाग्य हमें नहीं है। दादी के दिये उपहार मंदिर के अंदर की थाली में रख नहीं सकते, इसलिए बाहर की हुँडी में ही डाल दूँगी।" कमला ने जान-बूझकर थोडे-से ऊँचे स्वर में कहा, जिससे पुजारी भी अच्छी तरह से ये बातें सुन ले। कमला को मालूम था कि हुँडी में डाले गये उपहार मंदिर के होते हैं और वे ही जब थाली में रखे जाते हैं, तो वे पुजारी के होते हैं।

उपहारों की बातें कान में पड़ते ही पुजारी ने तुरंत मंदिर के दरवाज़े खोल दिये और उनसे कहा "लगता है, आप बहुत दूरी से आये हैं। तुरंत दर्शन कर लीजिये।" उन्होंने भगवान का दर्शन किया और कमला ने दादी की दी हुई छोटी-सी गठरी थाली में रखी। फिर दोनों बाहर आये।

"तुम्हारे कारण भगवान का दर्शन जी भरके कर लिया। दादी की मनौती भी पूरी हुई। जानूँ तो सही, दादी का वह उपहार क्या था?" कमलाकर ने पूछा। "दीप की बातियाँ। जो भी हों, समय पर हमारे काम

आयीं।" कमला ने हँसते हुए कहा।

दोनों बड़ी गली में आये। सोने की दो बड़ी-बड़ी दुकानों को दिखाते हुए कमलाकर ने कहा "तुम अभी सराय जाओ और सोने की चूड़ियाँ ले आओ। इतने में मैं दुकान में जाकर देखता रहूँगा कि क्या नये प्रकार की कोई चूड़ियाँ हैं?"

कमला सराय लौटी और जब संदूक से चूड़ियाँ निकालने लगी तब एक युवक ने वहाँ आकर कहा "मैं सोने की दुकान का कर्मचारी हूँ। साहब ने आपसे पूछकर जल्दी ही चूड़ियाँ लाने को कहा।" कमला के मन में संदेह जगा, पर अपने संदेह को बिल्कुल प्रकट न करते हुए उसने युवक से पूछा "चूड़ियों के साथ-साथ चंद्रहार को भी लाने को कहा है क्या? शायद वे चंद्रहार भी बदलना चाहते

होगी। ज़रा उनसे पूछकर आना।''

वह युवक थोड़ी देर में लौटा और बोला ''हाँ, साहब ने चंद्रहार भी लाने को कहा।'' कमला एकदम चिल्लायी ''अरे चोर, उचक्के, पुलिस को बुलाकर तेरे हाथों में अभी हथकड़ियाँ लगवाती हूँ।''

धोखेबाज़ पलटकर देखे बिना भाग गया। कमला ने ताड़ लिया कि उस युवक ने उसके पति की बातें सुन ली होंगी और उसे धोखा देने के इरादे से यहाँ आया है। कमलाकर को कमला ने जब यह पूरा किस्सा सुनाया तो उसने उसकी होशियारी की भरपूर तारीफ़ की।

यों, अपने काम सफलतापूर्वक पूरे हो जाने के बाद वे घर पहुँचे। उनके पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो गयी। यह देखकर वे चौंक पड़े कि ताला लगा हुआ नहीं है। अंदर किसी के चलने - फिरने की आवाज़ आ रही है।

कमलाकर चोर-चोर कहकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने ही वाला था तो कमला ने इशारा करके ऐसा करने से रोक दिया और दरवाज़ा खटखटाती हुई बोली ''मालिक, हम मुसाफ़िर हैं। बहुत रात हो गयी। हमें रामापुर जाना है। गले में क़ीमती गहने हैं, थैली में काफी धन है। इन्हें लिये रात के अंधेरे में जाना ख़तरे से खाली नहीं। आप दया करके हमें इस रात को अपने घर में रहने देंगे तो बड़ी कृपा होगी। सबेरे ही चले जायेंगे।''

तुरंत बिखरे बालोंवाले, नुकीली मूँछवाले एक आदमी ने खिड़की से झाँका और आकर दरवाज़ा खोला। कमला अपने हाथ की संदूक उसे देती हुई बोली ''इसमें दुल्हन के गहने और धन हैं। सावधानी से अलमारी में रखियेगा। सबेरे ले लेंगे।''

नुकीली मूँछवाला सर हिलाता हुआ बग़ल के कमरे में गया। कमला ने तुरंत दरवाज़ा बाहर से बंद कर दिया और कुंड़ी चढ़ा दी। फिर पति से बोली ''तुरंत पुलिस को बुलाइये।''

पत्नी की प्रत्युत्पन्न मति पर हर्षित होते हुए कमलाकर ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और कहा ''इतने दिनों तक तुम्हें मूर्ख, गँवारिन, बुद्धू कहता- समझता रहा; तुम्हारी दिल्लगी उड़ायी। तुम्हारी अक़्लमंदी के सामने तो शहर की लड़कियाँ कुछ भी नहीं है।'' कहकर वह पुलिस स्टेशन की ओर भागा।

प्रिय स्थल

गोकर्ण बहुत बड़ा यात्रास्थल है। परमशिव का वहाँ बहुत बड़ा मंदिर है। वहीं बहुत ही सुंदर उद्यानवन भी है। उस गाँव के नाट्य मंदिर में प्रातःकाल से संध्या तक नृत्य व संगीत के कार्यक्रम चलते ही रहते हैं। वहाँ के ग्रंथालय में अपूर्व ग्रंथ हैं।

यह सब देखने के लिए यादव वहाँ आया। उस गाँव में उसके ताऊ रहते हैं। ताऊ के चार बेटे हैं। उनके नाम हैं, चंद्र, सोम, गोपी और विश्वंभर। बड़ा बेटा चंद्र यादव की उम्र का है। चारों भाई उसके आने पर बहुत ही खुश हुए और उसे गाँव भर में घुमाया। वहाँ के विशिष्ट स्थलों को स्वयं दिखाया।

"तुम्हारा गाँव बढ़िया है। चार दिन रहने आया था। अब तो चालीस दिन यहाँ रहना चाहता हूँ।" यादव ने कहा। साथ ही गाँव की भरपूर प्रशंसा की।

चारों भाई उसकी बातों से बहुत ही खुश हुए। किन्तु उन्होंने यादव से बार-बार पूछा कि उसे सबसे अच्छा क्या लगा?

तब यादव ने उनसे कहा "जो जगह हमें भाती है, हम वहाँ अधिक समय तक रहना पसंद करते हैं। सच कहा जाए तो कभी-कभी हमें खुद मालूम नहीं पड़ता कि कौन-सी जगह अच्छी है। आप चारों चार स्थलों पर जाकर रहिये। जहाँ आप अधिक समय तक रहना पसंद करेंगे, वहीं आपका प्रिय स्थल है। आपके प्रिय स्थल की जानकारी के बाद मैं अपनी बात बताऊँगा।"

उसका प्रस्ताव भाइयों को सही लगा। चारों, चार दिनों तक, चार जगहों पर रहकर लौटे। तब उन्हें एक बात मालूम हुई। उन्हें लगा कि दूसरी जगहों में भी आकर्षनीय अंश हैं। उन्हें डर था कि जो जगह हमें पसंद

स्नेहलता

नहीं है, वहाँ हमें रहना पड़ेगा। पर उनका डर निराधार साबित हुआ। वहाँ रहते हुए उन्हें आनंद आया। इसी कारण थोड़े ज़्यादा दिन भी वहीं रहे।

उनकी बातें सुनकर यादव ने कहा "देखो, आप अनावश्यक ही ग़लतफ़हमी में पड़े हुए थे। हर जगह की अपनी-अपनी ख़ासियत होती है। खुले दिल से देखें और सोचें तो सब स्थल हमें अच्छे ही लगेंगे।"

यादव की ये बातें भाइयों में से किसी को भी ठीक नहीं लगीं। उन्होंने मुक्तकंठ से कहा "ऐसी बातें करके हमसे बचने की कोशिश मत करो। तुम भी हमारी ही तरह उन जगहों पर चार दिनों तक रहकर आना। जहाँ तुम ज़्यादा दिन रहोगे, वही तुम्हारा प्रिय स्थल है।"

"बाप रे, अब भी तुम लोग जान नहीं पाये? इस गाँव में हम सबका एक ही प्रिय स्थल है। है ना? फिर किस बात की परीक्षा हो?" यादव ने पूछा।

चंद्र ने मंदिर में, सोम ने उद्यानवन में, गोपी ने नृत्य-मंदिर में, विश्वंभर ने ग्रंथालय में अपना अधिक समय बिताया। इसलिए यादव की बात को समझने में कठिनाई हुई। उन्होंने उससे कहा "तुम्हारा मतलब हम समझ नहीं पाये।"

यादव ने मुस्कुराते हुए कहा "क्या आप लोग समझते हैं कि ऐसी विशिष्टताएँ क्या केवल गोकर्ण में ही हैं? इंद्रप्रस्थ, हस्तिनापुर, उज्जयिनी, तक्षशिला, अमरावती, विजयनगर, श्रीरंगपट्टण जैसे अनेकों स्थल हैं। हर जगह पर यहाँ से भी अधिक महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। फिर भी जानते हो, मैं इस गाँव में क्यों आया? ताऊ का प्रेम पाने, आप सबका स्नेह बाँटने यहाँ आया हूँ। यहाँ मेरा प्रिय स्थल है, तुम्हारा घर। कहीं भी जाएँ, वहाँ तो हम स्थिर रूप से रहनेवाले तो नहीं हैं। आख़िर हमें घर ही तो पहुँचना है। इस गाँव में भी अपना समय चाहें कहीं भी बिताएँ, किन्तु रहेंगे घर पर ही। इसलिए तुम्हारा प्रिय स्थल तुम्हारा घर है और मुझे भी पसंद है तुम्हारा ही घर। मैंने ठीक ही कहा ना?"

चारों भाइयों ने 'हाँ' के भाव में सिर हिलाया।

१४

(रूपधर का बेटा धीरमति अपने पिता के बारे में जानकारी प्राप्त करने पैलास गया। उसे मार डालने के लिए षड्‌यंत्र रचा गया था। वे समुद्र में उसकी बाट जोह रहे थे। लेकिन उनसे बच निकलकर वह अपने सुवरों के रखवाले के पास चला गया। वहाँ बाप-बेटे एक दूसरे से मिले। रूपधर ने शत्रुओं का नाश करने के लिए एक योजना बनायी। अपने पुत्र धीरमति से उसने बताया कि इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए उसे क्या करना होगा।)- बाद

धीरमति तड़के ही नगर जाने निकल पड़ा। उसने जाते-जाते रखवाले से कहा "चाचा, मुझे जल्दी घर पहुँचना है। माँ जब तक मुझे नहीं देखेगी, तब तक चैन की साँस नहीं लेगी। अब यह रहा तुम्हारा बुड्ढा अतिथि। यह घुमक्कड़ है। एक जगह पर निश्चिंत बैठनेवालों में से नहीं है। यहाँ उससे बैठा नहीं जायेगा। इसलिए इसे नगर में छोड़ आओ। घूम-फिरने के बाद भूख लगी तो भीख माँगकर अपना पेट भर लेगा।"

"हाँ, आप यहाँ रहने पर ज़ोर भी देंगे तो मुझसे रहा नहीं जायेगा। भिखारी के लिए सबके घर अपने ही घर के समान होते हैं। तुम जाना। जब धूप निकले तब इसे लेकर नगर पहुँच जाऊँगा। मेरे कपड़ों को तो देखो। चीथड़े हैं, चीथड़े। इसलिए सर्दी मैं सह नहीं सकता। कड़ी धूप में ही मैं नगर निकलूँगा।" रूपधर ने धीरमति से कहा।

अपने बेटे को बड़े प्रेम से आलिंगन में लिया। उसने कहा "आ गये बेटे, सोचा, फिर से तुमसे मिल न पाऊँगी। अपने पिता के बारे में जानने के लिए, मुझसे भी बताये बिना पैलास चले गये। क्या उनका कुछ पता चला? क्या समाचार ले आये?"

"माँ, बाल-बाल बच गया, किन्तु यह अब रोने-धोने का समय नहीं है। हमें चुप बैठना नहीं चाहिये। तुम फ़ौरन नहा लो और भगवान से प्रार्थना करो कि हम बदला लेने में सफल हों। इतने में एक बार मैं नगर हो आऊँगा। बताना मैं भूल ही गया। पैलास से मेरे साथ एक अतिथि भी आया हुआ है, उसे ले आऊँगा।"

वह अतिथि एक ज्ञानी है। धीरमति जब पैलास बंदरगाह से निकल रहा था, तब उसने उसे भी साथ ले जाने की प्रार्थना की। धीरमति बीच ही में उतर गया और सुवरों के रखवाले के पास चला गया। वह अन्य नाविकों के साथ दूसरे मार्ग से नगर में पहुँचा।

बेटे के कहे अनुसार पद्ममुखी ने नहाया, नूतन वस्त्र पहने और भक्तिपूर्वक भगवान से प्रार्थना की कि शत्रु-संहार निर्विघ्न हो।

इतने में धीरमति बाहर आया, अपनी बर्छी ली और अपने दो पालतू कुत्तों को लेकर नगर जाने निकला। उस समय घर में आराम से बैठे उसके शत्रुओं ने उसका कुशल-मंगल पूछा, मानों वे उसके आने से बहुत ही खुश हों। किन्तु उनके हृदय में द्वेष की अग्नि प्रज्वलित हो रही थी।

धीरमति ने अपना शत्रु-भाव किंचित

धीरमति तीव्र वेग से अपना घर चला गया। रास्ते में वह यही सोचता रहा "मैं और मेरे पिताश्री उन शत्रुओं से युद्ध कैसे करें और उनका सर्वनाश कैसे करें? क्या यह हमारे लिए संभव होगा? मुझमें तो इतनी शक्ति नहीं कि अकेले ही इन दुष्टों का नाश कर सकूँ। किन्तु पिताश्री के होते हुए मैं भला क्यों डरूँ। उनकी वीरता के सम्मुख ये दुरात्मा थोड़े ही टिक पायेंगे।" ऐसा सोचकर उसने अपने आपको समझा-बुझा लिया। उसकी सारी शंकाएँ अब दूर हो गयीं। वह जैसे ही घर पहुँचा, अपनी बर्छी एक स्तंभ से सटा दी और अंदर गया। घर की दासियाँ उसे देखकर खुशी से फूले न समायीं।

इतने में पद्ममुखी नीचे उतर आयी और

भी प्रकट होने नहीं दिया। उनसे निपटकर वह अपने पिता के दोस्तों की बैठक में पहुँचा। उनके प्रश्नों का वह समाधान देने लगा। उनसे बातचीत करते समय उसने बड़ी सावधानी बरती। उसने कहीं भी इसका आभास भी होने नहीं दिया कि वह अपने पिता के बारे में कुछ जानता है।

थोड़ी देर में, नाविक उस अतिथि को वहाँ ले आये। उसने धीरमति से कहा "तुम्हारे लिए प्रताप की दी भेंटें मेरे पास हैं। अपनी दासियों को भेजकर उन्हें मंगा लो।"

"मालूम नहीं, मेरे घर में बैठे दुष्ट कब मेरा अंत कर देंगे। कब मेरा गला घोंटकर मुझे परलोक भेज देंगे। इस स्थिति में भला इन भेंटों को अपने घर में क्योंकर रखवाऊँ? वे भेंटें उनके हस्तगत क्यों हों? अभी अपने ही यहाँ रहने दीजिये। जिस दिन उनका पिंड छूट जायेगा, तब आप ही उन भेंटों को मेरे घर रखवा दीजिये।"

फिर अतिथि को लेकर घर पहुँचा। घर में कालीन बिछे हुए थे। दासियों ने अतिथि का स्नान करवाया और कपड़े पहनाये। फिर वह और धीरमति भोजन करने बैठ गये। जब तक वे भोजन करते रहे, तब तक उनके सामने ही पद्ममुखी आसन पर बैठी तकली से महीन सूत कातने लगी।

भोजन की समाप्ति के बाद उसने बेटे से पूछा "बेटे, उन दुष्टों के आने के पहले ही बता देना कि तुम्हारे पिता के बारे में क्या समाचार ले आये।"

"सब बताऊँगा माँ। पैलास जाकर मैं नवद्योत से मिला। वे और उनके बेटों ने मेरी अच्छी तरह से देखभाल की। किन्तु उन्हें पिताजी के बारे में कोई जानकारी नहीं है। इसलिए उनके एक बेटे को लेकर एक गाड़ी में प्रताप से मिलने गया।

मेरी पूरी कहानी सुनने के बाद उन्होंने कहा कि तुम्हारे पिता अवश्य लौटेंगे और शत्रुओं का नाश कर देंगे। वे इन दुष्टों पर बहुत ही नाराज़ दीख रहे थे। प्रताप ने मुझसे कहा कि समुद्र पर सदा घूमते-फिरते एक वृद्ध ने उनसे कहा है कि उसने मेरे पिता को किसी द्वीप में देखा था। फिर मैं घर लौट आया। अलावा इसके, कोई और समाचार नहीं है।"

इस वार्तालाप को सुनते हुए उस वृद्ध

ने पद्ममुखी से कहा "देवी, सच क्या है, सुनो । तुम्हारा पति इस देश में आ चुका है । तुम्हारे घर में हो रहे अत्याचारों के बारे में उसे बखूबी मालूम है । मेरी अंतरात्मा कहती है कि इन दुष्टों का नाश शीघ्र ही उसके हाथों होकर ही रहेगा ।" यो उसने ज्योतिष बताया ।

"महाशय, आपकी बात सच निकले । अगर ऐसा ही हुआ तो मुँहमाँगा पुरस्कार आपको दूँगी" पद्ममुखी ने कहा ।

तीनों घर के अंदर इन बातों में मशगूल थे तो बाहर वे दुष्ट व्यायाम करने में व्यस्त थे । कुछ वज़नदार वस्तुएँ दूर फेंक रहे थे । कुछ और बर्छियों से निशाना मार रहे थे । इतने में उनका एक मुख्य नौकर आया और कहा "दुपहर हो गयी । खेल बंद कर दो और खाने आ जाओ ।" सब अंदर चले आये और भोजन करने आसनों पर बैठ गये । उसी दिन कटवायी बकरी का मांस परोसा गया और वे खाने में जुट गये ।

सुवरों के रखवाले ने रूपधर से कहा "मेरे यजमान ने तुम्हें नगर ले जाने की आज्ञा दी । चलो, चलते हैं । देरी भी हो गयी ।"

निकलने के पहले रूपधर ने अपने हाथ में एक मज़बूत लकड़ी ली और अपना झोला कंधे में लटकाकर चल पड़ा । आगे-आगे रखवाला जा रहा था और पीछे-पीछे दीन भिखारी की तरह लकड़ी के सहारे वृद्ध की तरह लड़खड़ाता हुआ चला आ रहा था ।

वे दोनों एक प्रपात के पास पहुँचे । तब वहाँ भेडों और बकरियों को हाँकता हुआ काली नामक एक आदमी आया । रूपधर को देखकर उसने पूछा "यह भिखारी कौन है? अरे ओ सुवरों के
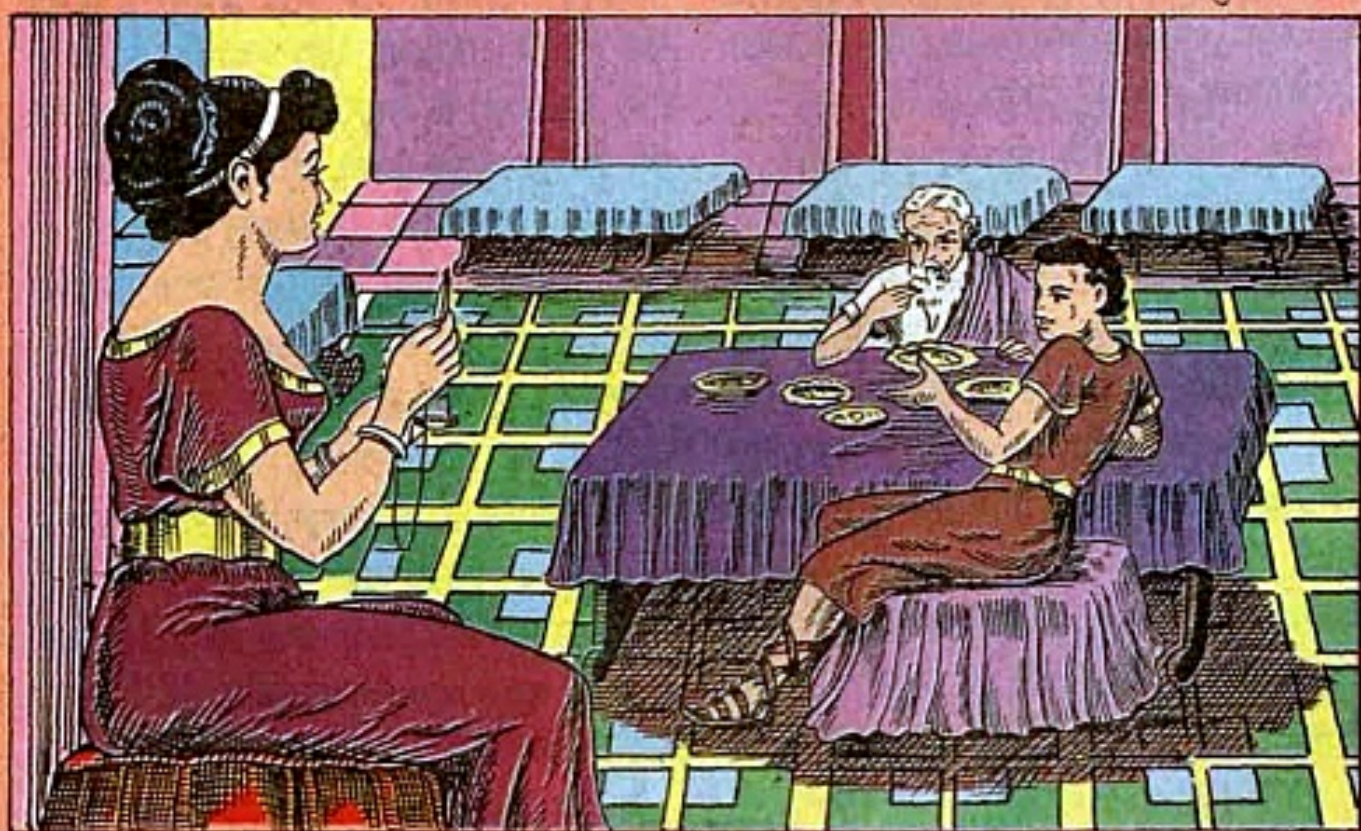
रखवाले, तुम्हें यह ज़िंदा लाश कहाँ से मिल गयी? ये भिखमंगे तो किसी काम के नहीं होते। भीख माँगते रहते हैं और लोगों को तंग करते है। इस दरिद्र को रूपधर के घर ले जाओगे तो वहाँ के बड़े लोग इसका ख़ातमा कर देंगे। चल हट निकम्मे।'' कहते हुए उसने रूपधर को लात मारी।

रूपधर अपने क्रोध पर काबू न पा सका। उसने चाहा कि लकड़ी से उसका सर फोड़ दूँ या उसे उठाकर जिस प्रकार साँप पर पथ्थर बरसाकर उसे मारते है, उसी प्रकार इसका भी सिर फोड़ दूँ। पर उसने यह सोचकर अपने क्रोध को पी लिया कि अभी वह समय नहीं आया।

सुवरों के रखवाले ने कटु स्वर में उस आदमी से कहा ''तुम्हारी यह हिम्मत। इतना घमंड। मालिक को आने दो। तुम्हारी ख़बर लेता हूँ।''

''बेवकूफ़ कहीं के, तुम्हारा मालिक थोड़े ही आयेगा। कहीं तुम पागल तो नहीं हो गये। अच्छा यही होगा कि देवताएँ धीरमति को भी अपने पास बुला लें। उन बडे आदमियों के हाथों उसकी मृत्यु निश्चित है।'' कहता हुआ वह भेड़-बकरियों को हाँकता हुआ घर की तरफ़ चला गया। जो भेड़-बकरियाँ वह पाल रहा है, वे रूपधर के घर बैठे उन दुष्टों के लिए ही हैं।

रूपधर और रखवाला घर के पास पहुँचे। अपना घर देखकर रूपधर ने कहा ''यह घर रूपधर का ही होगा। इतना बड़ा घर उसके सिवा और किसका हो सकता है? लगता है, अंदर भोजन कर रहे हैं। गंध से ही पता चल जाता है।''

''हाँ, गंध का पता तो सूँघने से चल ही जायेगा, पर पहले यह बताओ कि तुम पहले अंदर जाओगे या मैं जाऊँ। तुम बाहर ही खड़े होकर इधर-उधर टटोलते रहोगे तो तुम्हें कोई न कोई यहाँ से भगा देगा।'' सुवरों के रखवाले ने कहा।

जब वे दोनों बातों में लगे थे तब कचड़े के ढेर पर बैठे एक बूढ़े कुत्ते ने सर उठाया और रूपधर को ध्यान से देखने लगा। असल में वह कांति नामक एक शिकारी कुत्ता था। बचपन से ही रूपधर ने उस कुत्ते को पाला-पोसा। किन्तु उसके बड़े होते-होते वह युद्ध करने निकल पड़ा था। अब कांति की देखभाल करनेवाला कोई

नहीं रह गया । वह अब बहुत बूढ़ा हो गया और कचड़े के ढेर पर बैठकर मौत का इंतज़ार करने लगा । उसने अपने मालिक को पहचान लिया और दुम हिलाने लगा । उस कमज़ोर कुत्ते को देखकर रूपधर की आँखों में आँसू डबडबा आये । उसने रखवाले की तरफ़ घूमकर कहा "देखने में यह कुत्ता अच्छी नस्ल का लगता है । क्यों इसकी ऐसी बुरी हालत कर दी? शायद यह कुत्ता इन्हें उपयोगी न लगा हो ।"

"ऐसा न कहो । जब यजमान जीवित थे, तब देखनी थी इसकी शोखियाँ । शिकार पर इसे भी ले जाते तो यह सब कुत्तों से आगे दौड़ता और मृग का पता लगाता । इसका यजमान कहीं बेमौत मर गया तो यह यहाँ बेमौत मर रहा है ।" कहता हुआ रखवाला घर के अंदर चला गया ।

कांति ने अपने मालिक को देखने के बाद आँखें बंद कर लीं और मर गया, मानों वह इसी क्षण की प्रतीक्षा में था ।

घर के अंदर क़दम रखते ही धीरमति ने रखवाले को इशारे से आने को कहा । रखवाला धीरमति के सामने बैठ गया । इतने में रूपधर भी लकड़ी के सहारे डगमगाते हुए चलते हुए वृद्ध की तरह अंदर आया । देहली से सटकर बैठ गया ।

उसे इस रूप में देखकर शत्रु क्या, स्वयः उसकी पत्नी पद्ममुखी भी पहचान नहीं पायेगी कि यह वही तेजस्वी रूपधर है, जिसने ट्रोय युद्ध में अद्वितीय पात्र अदा किया ।

धीरमति ने बडी रोटी व मांस रखवाले को देते हुए कहा "यह उस आदमी को दो । उससे कहना कि घर के बाक़ी लोगों से भी थोड़ा-थोड़ा माँग ले ।"

रखवाले से रोटी और मांस लेते हुए रूपधर ने कहा "यजमान पर भगवान की सदा कृपा हो । उनकी सारी इच्छाएँ पूरी हों ।" कहकर आशीर्वाद दिया । अपने पिता की इस स्थिति को देखकर धीरमति की आँखों से आँसू बरस पड़े । रूपधर वहाँ से उठ गया और उस जगह पर गया, जहाँ वे दुष्ट खाने में जुटे थे । एक असली भिखमंगे की तरह वह हर एक के पास जाता रहा और भीख माँगता रहा ।

-सशेष
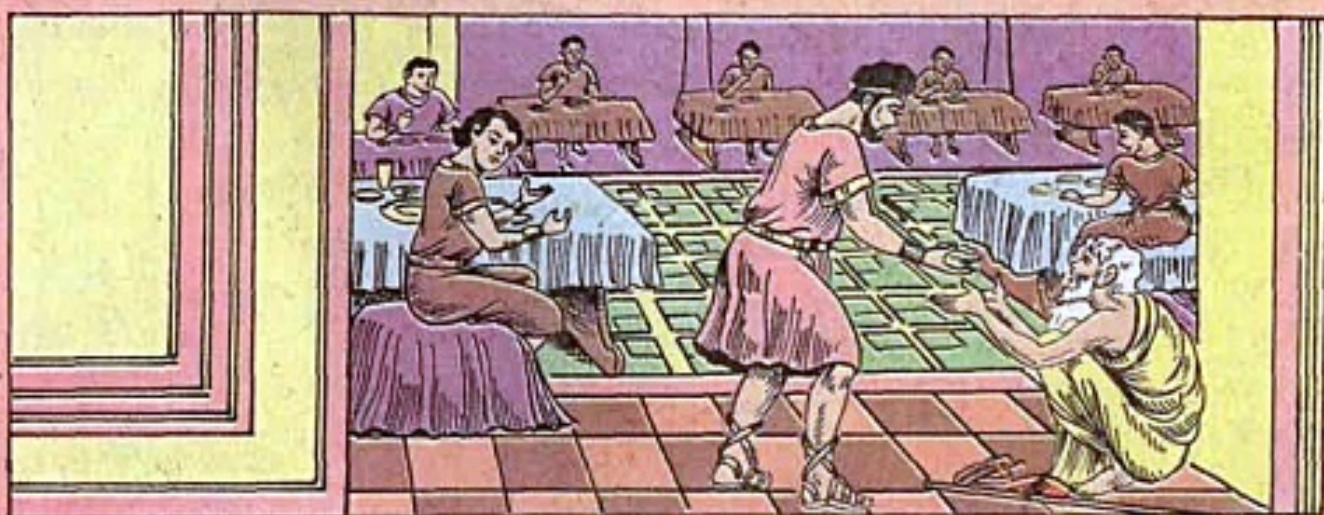
'चन्दामामा' की ख़बरें

एवरेस्ट की विशेषताएँ

युवती-युवक पहाड़ों पर चढ़ना बहुत पसंद करते हैं। एन.सी.सी. के विद्यार्थियों को पर्वतारोहण की शिक्षा दी जाती है। पर्वतारोहण की जब बात निकलती है, तो हमें तुरंत ही एवरेस्ट शिखर की याद आती है, जो संसार का सबसे बड़ा शिखर है। इसकी ऊँचाई है ८.८४७ मीटर। एवरेस्ट पर चढ़ने के लिए केवल उत्साह व शक्ति पर्याप्त नहीं हैं। पैसा चुकाना पड़ेगा। जानते हैं, कितनी रक़म चुकानी होगी? १०,००० डालर याने ३,५०,००० रुपये। यह रक़म नेपाल सरकार को चुकानी होगी। संसार के आठ ऊँचे शिखर उसी प्रदेश में हैं। इस बार के मौसम में एवरेस्ट पर चढ़ने के लिए ८० बृंद गये। ५७ बृंद शिखराग्र तक पहुँच पाये। इनमें से 'एवरेस्ट हीरो' टेनसिंग के इक्कीस साल का पोता जांग्लिंग भी शामिल है। उसके साथ फिन्ले ब्रिषर्स, एड्मंड कार्ल, वीस्टर्डस नाम के चित्रपटों के निर्माता भी हैं। तीसरी बार उन्होंने एवरेस्ट आरोहण में सफलता पायी। १९९२ में ५८ लोगों ने एवरेस्ट का अधिरोहण किया। १९९३ में एक ही दिन में ३५ अधिरोही शिखराग्र तक पहुँच पाये। नेपाल सरकार ने इस साल पर्वतारोहकों से ६४०,००० डालर वसूल किया। सरकार का कहना है कि 'एवरेस्टमार्ग' में बहुत भीड़ लग गयी। इसलिए उसका आदेश है कि हर बृंद को निर्णीत मार्ग से ही गुज़रना होगा। पर्वतारोहक जिन बेकार वस्तुओं को फेंकते हैं, कूड़ा-करकट छोड़ते जाते हैं, उन्हें इकट्ठा करके लाने के लिए षेर्पा नियुक्त किये जाते हैं। हाल ही में २,००० कि. ग्राम का कूड़ा-करकट हटा दिया गया है। षर्पाओं के सरदार का कहना है कि इतना कूड़ा-करकट हटा देने के बाद भी १५,००० किलो ग्राम और कूड़ा-करकट के बच जाने की संभावना है।

शीशे में संदेश

दक्षिण इंग्लैण्ड के जोग्रर रेजीस की आठ साल की लड़की विक्की थामस ने तीन सालों के पहले एक पत्र लिखा और उसे शीशे में डालकर बंद करके समुद्र में फेंक दिया। हाल ही में पश्चिम आस्ट्रेलिया के जेराल्टन नामक प्रदेश के युवक अंड्रू फिट्स को वह पत्र मिला। उसने उस पत्र का उत्तर भी दिया। उसने अपने उत्तर में कहा "इस शीशे ने लगभग १६,००० कि.मी. की दूरी की यात्रा की। यह एक बहुत बड़ा रिकार्ड है।" दुर्भाग्य की बात तो यह है कि ऐसे रिकार्डस को मान्यता देने के लिए गिन्नीस बुक में सुविधा नहीं है।

लौटा ऊँट

१९९१ में गल्फ में युद्ध छिड़ा। इस कारण वहाँ की स्थिति में बड़ी गड़बड़ी हुई। कुवेट के एक भाग के कुछ ऊँट डरकर छिन्नाभिन्न हो गये और कहीं भाग गये। उनमें से एक ऊँट पाँच सालों तक भटकता ही रहा और आख़िर अपने मालिक का घर ढूँढ़ता हुआ लौटा। लौटे अपने स्वस्थ ऊँट को देखकर मालिक बहुत खुश हुआ। ऊँट के मालिक महम्मद आल अव्वाइषीर ने ऊँट के विश्वास-स्वभाव का गुणगान करते हुए उसकी प्रशंसा में एक कविता रची।

गंधर्व गान

विक्रमार्क अपनी हार माननेवालों में से नहीं था। वह धुन का पक्का था। बार-बार बेताल उसके मौन-भंग में सफल हो रहा था, फिर भी वह निराश नहीं हुआ। उल्टे उसमें आग्रह तीव्रतर होता जा रहा था। वह फिर से पेड़ के पास गया, शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। यथावत् मौन श्मशान की ओर अग्रसर होने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "तुम्हारी कठोर दीक्षा का कारण मेरी समझ में नहीं आ रहा है। इस दीक्षा से तुम क्या साधना चाहते हो, यह भी मेरी समझ के बाहर है। मैं भली भांति जानता हूँ कि इस कठोर दीक्षा के कारण तुम्हें कितनी भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। तुम तो उत्तम कोटि के मनुष्य हो। धैर्य, निर्भीकता, कष्टों से जूझने की अपार शक्ति तुम्हारे व्यक्तित्व के परिचायक हैं। तुम्हारे इस विलक्षण व असमान व्यक्तित्व को

बैताल कथा
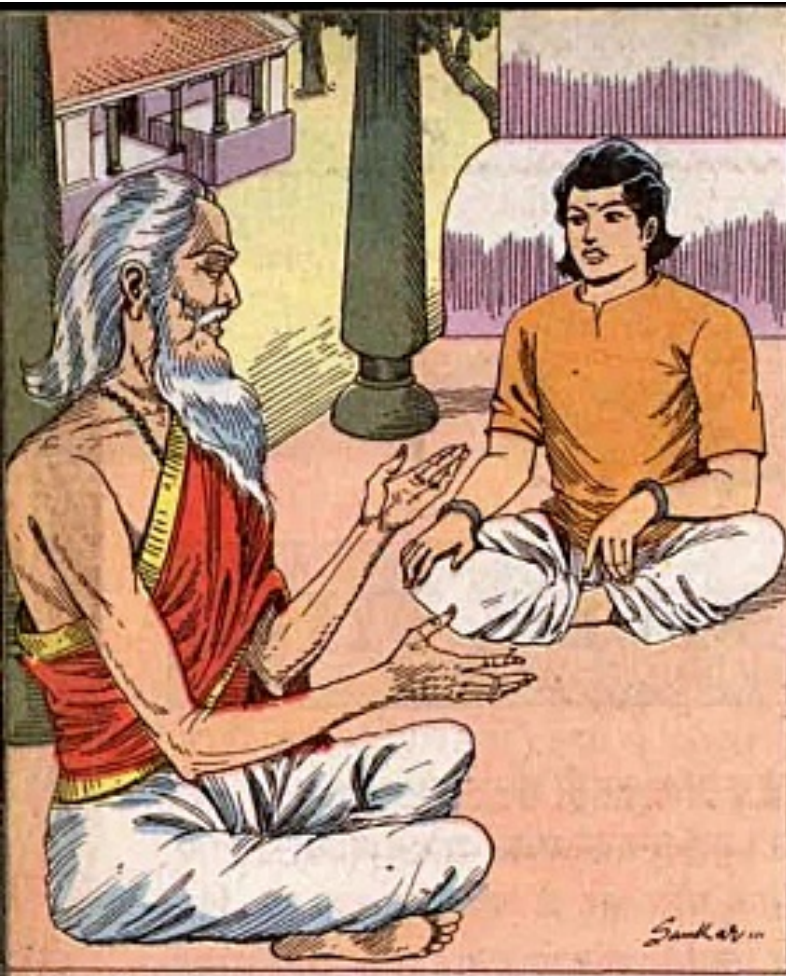
देखते हुए मुझमें तुम्हारे प्रति आदर की भावना दिन व दिन बढ़ती जा रही है। आखिर बताओ तो सही, तुम्हारी कठोर दीक्षा का लक्ष्य क्या है। क्या पाकर तुम संतृप्त हो पाओगे। तुम स्वयं बलशाली राजा हो। क्या कहीं तुमसे भी अधिक कोई बलवान राजा है, जिससे अपनी रक्षा के लिए शक्तियों के समीकरण में जुटे हो? नहीं तो सब राजाओं को हराकर चक्रवर्ती बनने की आकांक्षा है? जो भी हो, एक बात याद रखो। जो ऐसे ऐहिक सुखों व प्रख्याति पाने की इच्छा रखता हो, उसमें निशित परिज्ञान का होना आवश्यक है। उसमें वास्तविक जीवन को समझने की परिशीलन-शक्ति व संतुलित ज्ञान का होना अवश्यंभावी है। क्या सही है और क्या नहीं, इसका निर्णय लेने की भी योग्यता का होना ज़रूरी है। ऐसा न होकर अगर ऐसा व्यक्ति आध्यात्मिक चिंतन व तात्विक विषयों में आसक्ति रखता हो तो बड़े परिश्रम के फलस्वरूप उपलब्ध शक्तियाँ उसके हाथों से देखते-देखते फिसल जायेंगीं। उदाहरण के लिए देवशर्मा नामक एक युवक की कहानी तुम्हें सुनाऊँगा। अपनी थकावट दूर करते हुए ध्यान से उसकी कहानी सुनो।'' यों कहकर बेताल ने देवशर्मा की कहानी यों सुनायी।

देवशर्मा नामक युवक विशाल देश के एक कुग्राम में रहता था। इसका परिवार संगीत विद्वांसों का था। जन्म के साथ ही देवशर्मा ने संगीत में सहज पांडित्य पाया। उसके बचपन में ही माता-पिता गुज़र चुके थे। अपने घर में सुरक्षित ताल-पत्रों को पढ़कर उसने संगीत की साधना की और उस क्षेत्र में अपार ज्ञान प्राप्त किया।

विशाल देश के आस्थान का संगीत विद्वान हठात् मर गया। राजा ने निर्णय किया कि संगीत विद्या में स्पर्धाएँ चलायी जाएँ और उसमें जो ऐसा राग आलापेगा, जिसे आज तक किसी ने सुना नहीं और जो सभी की प्रशंसा का पात्र होगा, उसे आस्थान का विद्वान नियुक्त किया जाए।

यह घोषणा सुनकर देवशर्मा को लगा कि उसकी प्रतिभा को सबों के सम्मुख प्रदर्शित करने का सदवकाश आ ही गया। वह राजधानी निकला। दूसरे दिन दुपहर तक एक अग्रहार में पहुँचा। एक गृहस्थी ने उसे वहाँ आश्रय दिया। वह अस्सी साल का वृद्ध था। नाम था कश्यप। विवाह-योग्य उसकी एक पोती थी। वह वृद्ध भी संगीत विद्वान

था। उसने विश्वशर्मा से कहा कि "तुम्हारे दादा के बारे में सुन चुका हूँ। संगीत में वे असमान थे। अब तुम्हारा गाया गाना भी अद्भुत् है। परंतु हाँ, वह कोई अपूर्व नहीं।" थोड़ा समय लेकर उसने फिर कहा "एक अपूर्व राग है, जिसे मैं जानता हूँ।" कहकर उसने राग की पूर्व गाथा यों बतायी। कश्यप गुरुकुल में शिक्षा पा रहा था। एक बार वह समिधाओं के लिए जंगल में घूम रहा था। तब उसने एक मृदु मधुर कंठस्वर सुना। पहले उसे लगा कि यह किसी नये पक्षी की चहक होगी। फिर बाद उसे लगा कि यह हज़ारों भ्रमरों का झंकार नाद है। वह उस ओर बढ़ा, जहाँ से यह ध्वनि सुनायी दे रही थी। अंत में वह मुनि के आश्रम में पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि एक मुनि कन्या फूलों को हार में पिरो रही है और तन्मय होकर गा रही है। कश्यप के आने से उसने गाना बंद कर दिया। ऐसा संगीत कश्यप ने कभी भी इसके पहले सुना नहीं था। उसने मुनि को प्रणाम किया और प्रार्थना की कि यह राग मुझे भी सिखाइये।

तब मुनि ने उसे गंधर्वगान के बारे में बताते हुए कश्यप से कहा "पुत्र, यह लोकातीत अपूर्व राग है। अब से पाँच पीढ़ियों के पहले, हमारे एक पूर्वज गंधमादन पर्वत पर तपस्या करने गये। एक दिन जब वे पद्मासन डालकर तपस्या करने उपक्रम करने लगे तो उन्होंने एक अति मधुर राग सुना, जिसे उन्होंने पहले कभी नहीं सुना था। इस अद्भुत् राग का आलापन करते हुए प्रक्षापाल नामक एक गंधर्व आकाश से उतर

रहा था। वह पास ही के सरोवर के पास उतरा। तन्मय होकर उस राग को तपस्वी ने सुना। वे गंधर्व के पास आये और उससे कहा "महोदय, अब आपने जो राग आलापा, लगता है, विष्णु, इंद्र आदियों की सभाओं में नारद व तुंबुर से आलापा जानेवाला राग है। एक ही बार सुना और मैंने कंठस्थ कर लिया। धन्य हो गया।"

गंधर्व क्रोधित होकर बोला "तुम्हारा अनुमान सही है। तुमने अगर यह राग संपूर्ण रूप से किसी और को सिखाया तो दूसरे ही क्षण तुम उसे भूल जाओगे।" यों शाप देकर वह अदृश्य हो गया।

इस प्रकार, वह गंधर्व राग कश्यप के वश तक ही सीमित रह गया। "पुत्र, मैं तो यह राग जानता हूँ, लेकिन किसी पराये को

सिखाने का प्रश्न ही नहीं उठता। परंतु इसे जो गायेगा, उसे राजा अवश्य ही अपने आस्थान का विद्वान नियुक्त करेंगे।'' यों कहकर कश्यप ने गंधर्वराग का थोड़ा-सा अंश आलापा और रुक गया। देवशर्मा, तल्लीन होकर कश्यप का आलाप सुनता रहा। इतना सुमधुर संगीत इसके पहले उसने कभी नहीं सुना था।

देवशर्मा ने हाथ जोड़कर कहा ''महोदय, बीच ही में आपने क्यों रोक दिया? इस गंधर्व राग के क्या लक्षण हैं? पूरा आलापिये और उसका मुखड़ा भी सुनाइयेगा।''

''इतने आतुर क्यों हो रहे हो? तुम्हें सिखाऊँगा तो दूसरे ही क्षण मैं उसे भूल जाऊँगा। मेरी संपूर्ण संपत्ति यही संगीत है। मेरी पोती बिन माँ-बाप की है। उसे किसी योग्य व्यक्ति की पत्नी बनाना मेरा प्रथम कर्तव्य है। इस जिम्मेदारी को निभाने के बाद ही मुझे शांति मिलेगी।'' थोड़ी दूर बैठी अपनी पोती को दिखाते हुए उसने कहा।

जप-तप पूरे होने के बाद कश्यप ने, देवशर्मा को अपने सामने बिठाया। पीछे बैठकर उसकी पोती तंबूरा बजा रही थी। कश्यप ने वीणा बजाते हुए गंधर्व राग आलापा। उस राग के लक्षणों पर भी प्रकाश डाला। देवशर्मा व कश्यप की पोती उन लक्षणों का विशदीकरण सुनकर बहुत ही प्रभावित हुए।

देवशर्मा के आनंद के उद्वेग को देखकर कश्यप की पोती ने कहा ''मेरे दादाजी ने आपसे जो बातें कीं, उनसे लग रहा था, मानों उन्होंने यह संगीत-संपदा मेरे लिए ही सुरक्षित रखी है। और यह संपदा आपको तभी मिलेगी, जब आप मुझसे विवाह करेंगे। आपके चले जाने के बाद मैंने अपने दादाजी से इसके बारे में बातें कीं। मैंने ज़ोर भी दिया कि दोनों एक-दूसरे से जोड़े न जाएँ। दादाजी ने मान लिया। इसलिए अब आप पर मुझसे विवाह करने का दबाव नहीं है।''

''आपसे विवाह रचाने में मुझे कोई संकोच नहीं। संकोच आपकी तरफ से हो सकता है, पर मेरी तरफ़ से बिल्कुल नहीं। क्योंकि, राजधानी जाकर संगीत-स्पर्धा में भाग लेने का विचार मैंने त्याग दिया।'' देवशर्मा ने मुस्कुराते हुए कहा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा ''राजन्, देवशर्मा राजधानी जाकर संगीत-स्पर्धा में भाग लेकर विजयी बनने के सपने

देख रहा था। ऐहिक सुख व प्रसिद्धि पाना ही उसका मुख्य उद्देश्य था। इसके लिए उसने कश्यप से अपूर्व राग का भी ज्ञान प्राप्त किया। कश्यप की पोती ने स्पष्ट कर दिया कि इस राग को सिखाने के पीछे कोई स्वार्थ नहीं। फिर भी देवशर्मा ने राजधानी न जाने का क्यों निर्णय लिया? क्या उसमें आखिरी क्षण कहीं विरक्ति तो उत्पन्न नहीं हुई? मानसिक बलहीनता के वश हो जीवन में जो साधा, उसे खोना नहीं चाहिये। परंतु, देवशर्मा ने जान-बूझकर खो दिया और यह उसका अज्ञान नहीं तो और क्या है? जानते हुए भी मेरे इन संदेहों के समाधान नहीं दोगे तो तुम्हारा सिर फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने उसके संदेहों को दूर करते हुए कहा ''कोई भी सच्चा कलाकार ऐहिक सुखों व धन-संपत्तियों के लिए अपनी कला को नहीं बेचता। देवशर्मा संगीत-विद्वानों के परिवार का सदस्य है। उसके दादा परदादा राजा की शरण में कभी नहीं गये। उनका आश्रय नहीं चाहा। जो है, उसी में सुखी और शांत जीवन बिताने का उनका लक्ष्य रहा। समाज में उनका आदर होता रहा। ऐसे परिवार में जन्मे देवशर्मा संगीत-स्पर्धा में भाग लेना चाहता था, और आस्थान का विद्वान बनने की आकांक्षा रखता था। हाँ, इससे अवश्य ही उसमें थोड़ी-बहुत मानसिक बलहीनता दृष्टिगोचर होती है। किन्तु कश्यप से अपूर्व राग के आलाप को सुनने के बाद उसे लगा कि ऐसे अपूर्व राग को स्पर्धा में आलापना अपराध है। अन्यों को यह राग सुनाया जाए तो उसका मूल्य ही क्या रह जायेगा? उत्तम कला का सर्वप्रथम प्रयोजन है, कला के आराधक की आत्मा को आनंद पहुँचाना। जो कलाकार किसी एक प्रत्येक कला में सक्षम हो जाता है, वह नहीं चाहता कि उसकी कला के माध्यम से अपने किसी स्वार्थ की पूर्ति हो। इन कारणों से यह समझना ग़लत है कि देवशर्मा ने मानसिक बलहीनता के चंगुल में फँसकर ऐसा निर्णय लिया। यह समझना भी त्रुटिपूर्ण है कि अज्ञान के कारण उसने ऐसा क़दम उठाया।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव को लेकर अदृश्य हो गया।

आधार - किरण चतुर्भुज की रचना

हानि-लाभ

चंद्रपुर के कल्याणराम का परिवार अतिथि-सत्कार के लिए बहुत ही प्रसिद्ध था। एक बार विकार नामक दूर का एक रिश्तेदार उनके घर आया। बच्चों को रुलाने का उसे बड़ा शौक़ था।

कल्याणराम का पोता सीताराम दस साल का था। चित्रलेखन में उसकी अभिरुचि थी। हर दिन कोई न कोई चित्रलेखन करता रहता था। उसने घोड़े का एक चित्र खींचा और उसे अपने दूर के रिश्तेदार विकार को दिखाया। सीताराम को आशा थी कि वह उसके चित्र की प्रशंसा करेगा। किन्तु उस चित्र को देखते ही उसे गधा कहकर ठठाकर हँसने लगा। वहाँ जमे पड़ोसी लडकों ने विकार की टिप्पणी पर हँस दिया।

सीताराम को लगा कि जान-बूझकर उसका अपमान किया जा रहा है। विकार ने सीताराम से कहा "तुम चित्रांकन अच्छा करते हो। यह गधा है और इस गधे का चित्र तुमने बड़ी खूबी से खींचा। अब एक बात जानो। इससे स्पष्ट है कि आगे से तुम घोड़े का चित्र खींचना चाहते हो तो गधे का चित्र खींचो। तब वह घोड़ा लगेगा।"

उसने और कहा "आगे से अपना हर चित्र मुझे दिखाओ। मैं बताऊँगा कि वह चित्र क्या है? मेरी सलाहों से तुम अच्छे चित्रकार बन सकते हो। तुम्हारी इस कला को सुधारने में मैं सहायक बनूँगा।"

उसकी बातों पर बच्चे और ज़ोर से हँस पड़े। इससे सीताराम में पौरुष जगा। वह घोड़े के चित्र को लेकर पड़ोसी चंद्रपाल के पास गया।

चंद्रपाल उत्तम कोटि का चित्रकार था। उसने ही सीताराम को चित्रलेखन करने का प्रोत्साहन दिया। सीताराम की बतायी सारी बातें सुनने और घोड़े के चित्र को देखने के

रमेश पंत

बाद उसने कहा "तुम पहले से भी अधिक अच्छी तरह से चित्र खींच रहे हो। किन्तु तुममें जल्दबाजी अधिक है। किसी भी कला को सीखने के लिए श्रद्धा नितांत आवश्यक है। अगर तुम श्रद्धा से सीखने का वचन दोगे तो मैं तुम्हें चित्रकला की बारीकियाँ सिखाऊँगा। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद जो तुमने देखा, हूबहू वही दिखा पाओगे।"

सीताराम ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब मैं अपने काम में पूरा ध्यान लगाऊँगा। हर दिन वह चंद्रपाल के पास आता और एकाग्रता से चित्रकला का अभ्यास करता रहता। दिन ब दिन उसकी चित्रकला में प्रगति होती गयी। चित्रों में रंग उभरने लगा। पर विकार उसके हर चित्र की नुक़्ताचीनी करता ही रहा।

दो महीनों के बाद सीताराम ने, चंद्रपाल से कहा "विकार मेरे चित्रों को पसंद नहीं करता। इसका मुझे बहुत दुख है।" उसके स्वर में निरुत्साह था।

चंद्रपाल ने स्वयं एक चित्र बनाया और कहा "इसे विकार को दिखाओ और कहो कि यह चित्र तुम्हीं ने खींचा। फिर लौटकर मुझसे बताना कि क्या हुआ?"

सीताराम ने वह चित्र देखा। वह गदाधारी भीम की तस्वीर थी। तस्वीर बहुत ही अच्छी बनी। जीव-कला उसमें टपक रही थी। उसने वह चित्र जब विकार को दिखाया, तब उसने हँसकर कहा "तुमने भीम का चित्र बनाना चाहा, किन्तु तुमने तो जांबवंत का चित्र बनाया।" यों उसकी दिल्लगी उड़ायी।

सीताराम ने मन मसोसकर कहा "यह भीमसेन का चित्र है।" विकार ने ठठाकर हँसते हुए कहा "तुम किसी एक युग का चित्र खींचना चाहते हो तो उसमें दूसरे युग का चित्र आ जाता है।"

सीताराम लौटा और चंद्रपाल से सब कुछ बताया और कहा "आप भी चित्रकला में कमज़ोर हैं। इसीलिए मैं भी चित्रकला में माहिर नहीं हो पा रहा हूँ।" तब चंद्रपाल ने कहा "मुझे संदेह हो रहा है कि विकार की बुद्धि टेढ़ी है; दुर्बुद्धि का है। बताओ, वह कैसा आदमी है?" "दो महीनों से हमारे घर में आसन जमाये बैठा है। जो खाना चाहता है, निर्लज्ज होकर पकवाकर खाये जा रहा है। सबों से अपनी सेवाएँ करवा रहा है। वह जाने का नाम ही नहीं ले रहा है। सब उससे चिढ़े हुए हैं।" सीताराम ने कहा।

''ठीक है, मैं एक चित्र बनाऊँगा। जब विकार सबों के साथ बैठा होगा, तब उस चित्र को, विकार के सिवा बाक़ी सबको दिखाना। बताना कि यह चित्र तुमने स्वयं खींचा। देखना कि तब उसकी क्या स्थिति होगी। अपनी उँगली से अपनी ही आँख को चुभो लेगा, ऐसी हो जायेगी उसकी दुस्थिति। जैसे को तैसा मिलेगा।''

सीताराम ने चंद्रपाल के कहे मुताबिक़ ही किया। उस चित्र को देखकर उसके दादा ने कहा 'सुवर'। दादी ने कहा 'भैंस'। पिता ने उस चित्र को 'गधा' बताया। माँ ने 'बैल' कहा। बालकों में से एक ने उस चित्र को 'कुत्ता' कहा तो एक ने उसे 'सियार' बताया।

यह सब सुनते हुए विकार मज़ा ले रहा था। उसने उत्साह-भरे स्वर में कहा ''ज़रा मुझे भी एक बार दिखाना। मैं भी बताऊँगा कि मुझे क्या लगता है-।'' कहते हुए उसने उस चित्र को अपने हाथ में लिया।

बस, उसे देखते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया।

वह तस्वीर हूबहू विकार की ही थी। अब विकार समझ गया कि सीताराम का परिवार उससे कितना नाराज़ है। उससे कितनी घृणा कर रहा है। सीताराम के अच्छे चित्र में भी कोई न कोई खोट निकालता था और उसका नाम ही बदल देता था। ऐसा करके वह अपने आप खुश होता था। सीताराम के परिवार ने उसी का व्यवहार दुहराया तो इसमें उनकी क्या ग़लती है।

विकार तुरंत अपना गाँव लौटने निकल पड़ा। बहुत ही खुश सीताराम से कल्याणराम से कहा ''तुम्हारे चित्रों पर टीका-टिप्पणी करनेवाले विकार को हानि पहुँची तो उससे हमें लाभ हुआ।'' तब वहाँ आये चंद्रपाल ने कल्याणराम से कहा ''सीताराम को चित्रकला में अभिरुचि है। प्रोत्साहन देने पर अच्छा चित्रकार बन सकता है। उसके चित्रों को लेकर उसकी दिल्लगी उड़ाना अनुचित है। बच्चों की बौद्धिक शक्ति पनपे, किसी एक क्षेत्र में वे निखरें, इसके लिए चाहिए बड़ों का प्रोत्साहन, उनकी अच्छी और मीठी बातें। यह बड़ों की जिम्मेदारी भी है।''

कल्याणराम ने, अपने पोते को बड़े प्यार से देखा, उसकी पीठ थपथपायी। सीताराम अब बहुत ही प्रसन्न है।

समुद्र-तट की सैर – १०

केरल की भूमि में

शब्द : मीरा नायर ◆ चित्र : गोपकुमार

अरब सागर के साथ-साथ कर्नाटक से आगे बढ़ने पर हम केरल पहुंचते हैं, जिसकी हरी-भरी तंग तटपट्टी लगभग ५५० कि.मी. लंबी है. 'केर' अर्थात् नारियल के वृक्षों का देश है केरल. मूल रूप से इसका नाम 'चेरलम्' था, जिसका अर्थ है – समुद्र के हटने से निकली जमीन. मान्यता है कि परशुराम ने अपना फरसा समुद्र में फेंक कर इस भूमि की सृष्टि की थी. भूविज्ञानियों का कहना है कि भारतीय भूखंड के बन जाने के बहुत बाद केरल की जमीन ज्वालामुखियों की सक्रियता से बनी.

ईसा के जन्म से बहुत पहले से ही मिस्र, अरबस्तान, यूनान, असीरिया तथा रोम के समुद्री व्यापारी मलबार तट पर आया करते थे. मुख्य रूप से वे आते थे काली मिर्च खरीदने के लिए, जोकि यहां बहुतायत से उगती है. कण्णूर, तलशेरी, कोषिक्कोड, पदंलयानी, बेइपोर और कोइलांडी उत्तर मलबार के समृद्ध बंदरगाहों में से थे.

उत्तर केरल के कण्णूर जिले में एषिमला की २१६ मीटर ऊंची चट्टानी पहाड़ी समुद्र में २५० मीटर भीतर तक पच्चर की तरह घुसी हुई है.

एषिमला में एक नेवी एकैडमी आरंभ होने वाली है.

एषिमला और चट्टानी समुद्र-तट

भारतीय सरकस उद्योग की शुरूआत केरल में ही हुई. यह बात ध्यान देने योग्य है कि आज भी भारत की लगभग सभी प्रमुख सरकस-टोलियों का संचालन कण्णूर-तलशेरी इलाके के मलयालियों के हाथों में है. देश का पहला सरकस प्रशिक्षणालय १९०१ में कुंञिरामन् ने तलशेरी में स्थापित किया. वे केरल के सामरिक खेल कलरिपयट्टु के विशेषज्ञ थे.

तलशेरी के दक्षिण में छोटा-सा खूबसूरत शहर माहे है, जो कि केंद्र-शासित प्रदेश पांडिचेरी का हिस्सा है. पहले इसका नाम 'मय्यषि' था. बाद में फ्रांसीसियों ने कप्तान बेर्त्रां फ्रॉन्स्वा माहे द लाबूर्दोने के नाम पर इसका नाम माहे कर दिया. इस कप्तान ने फ्रांस की ओर से यह शहर हथियाया था. जब फ्रांसीसी भारत से हटने लगे, तब उन्होंने अपने भारतीय उपनिवेशों के बाशिंदों को फ्रांसीसी नागरिकता लेने की छूट दी. इसलिए इस केंद्र-शासित क्षेत्र में बहुत-से भारतीय मूल के फ्रांसीसी नागरिक हैं. फ्रांस की संसद में विदेशस्थ फ्रांसीसी नागरिकों का एक प्रतिनिधि बैठता है.

माहे के दक्षिण में है वडक्केरा या बडगरा, जो कि तिजारती शहर है. काली मिर्च और नारियल का व्यापार यहां मुख्य रूप से होता है. उत्तर मलबार की लोककथाओं के महान वीर तच्चोलि ओतेनन् का जन्मस्थान बडगरा ही था. इस योद्धा के बहादुरी-भरे कारनामे 'वडक्कन् पाट्टुक-लू' में गाये गये हैं. इन्हें उत्तर मलबार की आल्हा समझिए. ओतेनन् के सम्मान में बडगरा के नजदीक एक मंदिर में हर साल उत्सव होता है.

केरल का सामरिक खेल कलरिपयट्टु

कोषिक्कोड और मुर्गे की बांग

आगे दक्षिण दिशा में चलने पर हम पंदलयानी पहुंचते हैं, जिसका काफी ऐतिहासिक महत्व है. यहां पर छठी सदी ई. में बनी एक मस्जिद है, जो मक्का शरीफ की मस्जिद से बहुत मिलती-जुलती है. इसका निर्माण मलिक इब्न दीनार ने करवाया था. इसके गुंबज पर तांबे की चद्दर मढ़ी हुई थी. इधर से निकलनेवाले अरब जहाज इस मस्जिद को नमस्कार करने के लिए रुकते थे.

मस्जिद के नजदीक समुद्र-तट पर एक पदचिह्न बना हुआ है. स्थानीय लोग ऐसा मानते हैं कि हजरत आदम श्रीलंका जाते हुए रास्ते में यहां भारत की भूमि पर उतरे थे और ये उनके चरणचिह्न हैं.

दक्षिण में और आगे कोषिक्कोड आता है, जिसे पहले अंग्रेजी ढंग से कैलिकट कहा जाता था. ईसा की नौवीं सदी में मलबार का अंतिम शासक चेरमान् पेरुमाल् अपना राज्य अपने सरदारों में बांट कर मक्का जाने लगा. तब ज़ामोरिन् नाम के सरदार से उसने कहा कि तालि के मंदिर में बांग देते मुर्गे (कोषि) की आवाज जहां-जहां तक सुनाई दे, वह सब जमीन तुम्हारी होगी. तब से यह प्रदेश कोषिक्कोड यानी मुर्गे के बांग देने की भूमि कहलाने लगा.

वस्तुतः 'ज़ामोरिन्' परंपरागत उपाधि है. यह 'समुद्रिन्' (अर्थात् समुद्र का स्वामी) शब्द का बदला हुआ रूप है.

ज़ामोरिनों ने कुंञालि मरक्कार नाम से प्रसिद्ध अपने जलसेनापतियों की मदद से कोषिक्कोड को बहुत शक्तिशाली समुद्री राज्य बना दिया.

ज़ामोरिन की खिदमत में वास्को द गामा
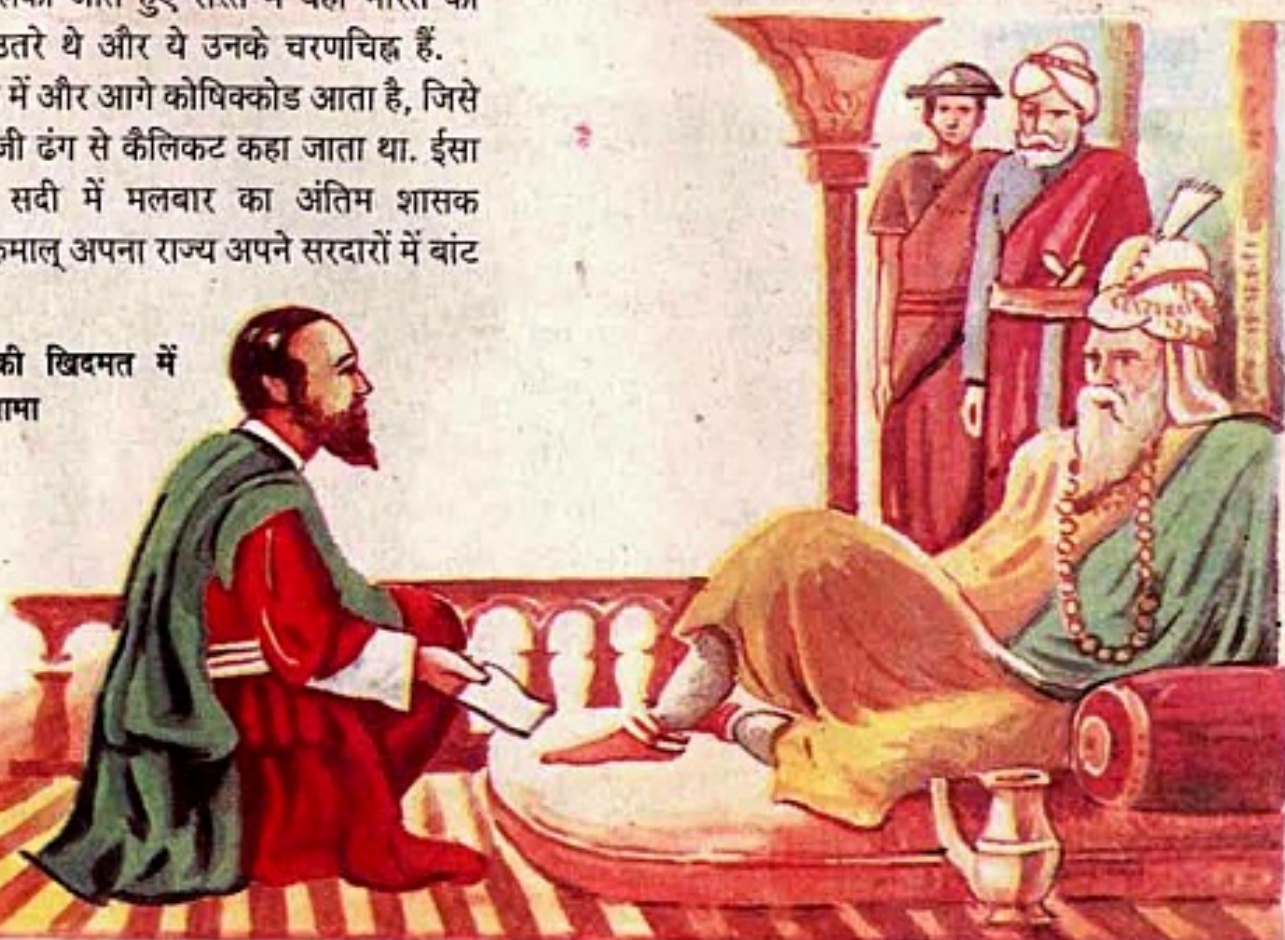
१५ वीं सदी ई. के आरंभ में चीन के समुद्री व्यापारी कोषिक्कोड के साथ व्यापार करते थे और सोना, चांदी, तांबा और रेशम दे कर काली मिर्च, दालचीनी, अदरक और सूती कपड़ा यहां से ले जाते थे.

वास्को द गामा ने कोषिक्कोड के पास ही २० मई १४९८ को भारत की जमीन पर पैर रखे. यह आगे चल कर ऐतिहासिक घटना सिद्ध हुई. वास्को द गामा ने भारत और शेष एशिया पहुंचने का समुद्री मार्ग यूरोपीयों के लिए जो खोज निकाला, उससे बहुत-से देशों का भाग्य बना-बिगड़ा.

वास्को द गामा ने ज़ामोरिन् से मुलाकात की. ज़ामोरिन ने शिष्टता के साथ उसका स्वागत तो किया, लेकिन वह जो तोहफे लाया था – टोपियां, धारीदार कपड़े, मूंगे की मालाएं और हाथ धोने के बरतन वगैरह – वे उसे बहुत तुच्छ लगे. आरंभ में टालमटोल करने के बाद, ज़ामोरिन् ने कोषिक्कोड में किला बांधने की अनुमति वास्को द गामा को दे दी.

अंग्रेज कोषिक्कोड में पहले १६१५ ई. में आये. लेकिन उनकी ईस्ट इंडिया कंपनी १७९२ ई. में टीपू सुलतान के साथ हुई संधि के तहत ही इस शहर पर कब्जा कर पायी.

कोषिक्कोड अब इमारती लकड़ी और शहतीर उद्योग का केंद्र है. कोषिक्कोड के उपनगर कल्लाई का शहतीर-बाड़ा दुनिया में इस ढंग के सबसे विशाल बाड़ों में गिना जाता है.

कोषिक्कोड से ९ कि.मी. दक्षिण में है तटवर्ती शहर बेइपोर. टीपू सुलतान ने इसे 'टीपू पट्टणम्' नाम दे कर इसे मलबार की राजधानी बनाया था. यहां नावें बनाने का कारखाना है. यहां पर नारियल का व्यापार होता है.

शहतीर घसीटता हुआ हाथी. बाइबल के 'पुराने विधान' में वर्णित राजा सुलेमान (सालोमन) का मंदिर केरल की सागवान की लकड़ी से बना था.
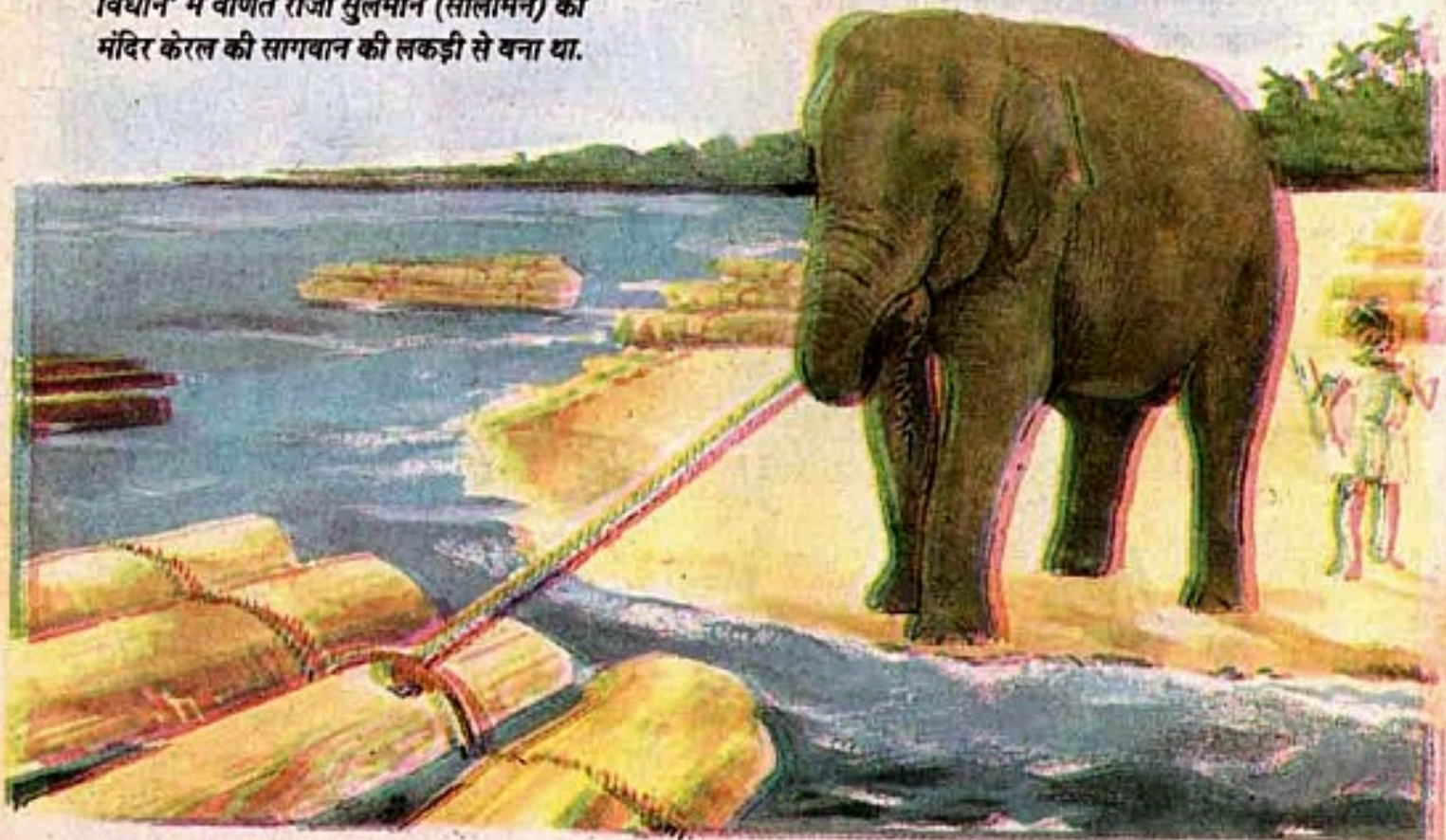
शिथिल आलय

पूर्व काल में दंडकारण्य में रक्त पिपासी नामक एक राक्षस था। अपनी भूख मिटाने के लिए वह जंतुओं का शिकार करता था और उन्हें खा जाता था। किन्तु उसे नर-माँस बहुत ही पसंद था। पर, उन प्राँतों में नर-संचार नहीं के बराबर था। महीने या दो महीनों में एक बार कभी कोई मनुष्य दिखता तो राक्षस बहुत भी भीकर रूप से चिल्लाता, उसका पीछा करता और पकड़कर खा जाता था। खा जाने के बाद एक दिन और एक रात अपनी गुफ़ा में वह आराम से सो जाता था।

यहाँ के जंगल में एक शिथिल आलय था। इसमें किरणाक्षिणी नामक देवी की मूर्ति थी। इस देवी की शक्तियाँ अद्भुत थीं। एक समय था, जब कि वहाँ समस्त संपदाओं से भरा राज्य था। जो उस देवी के आश्रय में जाते, उन्हें वह वर देती और उनकी इच्छाओं की पूर्ति करती थी। एक बार उस प्राँत में अति भयंकर भूकंप हुआ और राज्य का अधिकाधिक भाग मिट्टी में मिल गया। बचे-खुचे कुछ लोग दूसरे प्रदेशों में चले गये। किन्तु किरणाक्षिणी मंदिर को इस भूकंप से कोई क्षति नहीं पहुँची। क्रमशः राज्य का वह पूरा भाग कुछ ही सालों में महारण्य के रूप में परिवर्तित हो गया।

वह अरण्य राक्षस रक्तपिपासी का निवास-स्थल बन गया। एक दिन रात को उसे बड़ी भूख लगी। वह गुफ़ा से बाहर निकला और किसी जंतु की खोज में मग्न हो गया। चाँदनी खिली हुई थी। किरणाक्षिणी शिथिल आलय की मूर्ति से प्रकट हुई और बाहर आकर चाँदनी में टहलने लगी।

रक्तपिपासी ने उसे दूर से देखा तो उसके

मुँह में पानी भर आया । उसकी चिल्लाहट से दिशाएँ गूँज उठीं । वह किरणाक्षिणी की तरफ़ बढ़ा । जब वह समीप आया तो देवी ने उसे तीव्र रूप से देखते हुए कहा ''अरे अधम राक्षस, तुम नहीं जानते कि मैं कौन हूँ और मुझे खाने के लिए बढ़े चले आ रहे हो । मैं किरणाक्षिणी देवी हूँ ।''

राक्षस ने विकट अट्टहास करते हुए कहा ''तुम जो भी हो, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं । तुम अब मेरी दृष्टि में मेरी भूख मिटानेवाले रुचिकर पदार्थ मात्र हो ।''

''तुम्हारे अहंकार का सही दंड दूँगी ।'' कहती हुई किरणाक्षिणी ने अपने शूल को हाथ में लिया और राक्षस की ओर फेंका । शूल से निकली लाल किरणें राक्षस के आँखों पर पड़ीं । वह वहीं अंधा हो गया । अब राक्षस को किरणाक्षिणी की शक्तियों का आभास हुआ । वह देवी के पैरों पर गिर पड़ा और गिड़गिड़ाने लगा ''माँ, अनजाने में अपराध हो गया । मुझे क्षमा कर दो ।''

देवी शांत हो गयी और कहा ''तुम्हारा अपराध अक्षम्य है । तुम जैसे अहंकारी को थोड़ा-बहुत दंड मिलना चाहिये । तुम्हें सिर्फ एक आँख से देखने की शक्ति देती हूँ ।''

रक्तपिपासी अब एक ही आँख से देख सकता है । इसपर वह खुश हुआ और उसने देवी से कहा ''माँ, अब से मैं तुम्हारा दास हूँ । ऐसा वर प्रदान करो, जिससे हर दिन तुम्हारे दर्शन कर सकूँ ।''

देवी ने उसे शिथिल आलय दिखाया और कहा ''वहीं मेरा निवास है । अब से नरमांस-भक्षण त्यज दो । हेय राक्षस जन्म से मुक्ति पाने का प्रयास करो । मैं सदाचारी भक्तों की इच्छाएँ सदा पूरी करती हूँ ।''

रक्तपिपासी ने श्रद्धापूर्वक देवी को नमस्कार किया । वह अदृश्य हो गयी । राक्षस गुफ़ा की तरफ़ चला गया ।

यह घटना जहाँ घटी, उसके पास ही एक वट वृक्ष था । उसकी टहनियों में छिपे त्रिश्वनाथ ने यह दृश्य देखा । वह वैशाली राज्य का गुप्तचर था । उसकी समझ में आ गया कि किरणाक्षिणी कितनी शक्तिशाली देवी है । पेड़ से उतरकर वह मंदिर में आया और देवी के सम्मुख खड़े होकर कहा ''माँ, जो हुआ, मैंने देख लिया । मेरा पुत्र गूंगा है । मैंने अनेकों प्रकार की चिकित्साएँ करायीं, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ ।

आशीर्वाद दो, जिससे वह बोल सके ।'' प्रार्थना करके वह चला गया ।

एक और विचित्र घटना घटी । थोड़ी देर के बाद झाड़ियों के पीछे से वीरबाहु नामक एक तीर्थयात्री बाहर आया । वह उदयपुर का नागरिक था । उसने भी उक्त दृश्य देख लिया था । राक्षस के भय से अब भी वह पीडित था । वह डरते-डरते मंदिर के पास आया और कहा ''जगन्माते, मैं संतानहीन हूँ । वर दो कि मेरी संतान हो ।''

कुछ दिनों के बाद विश्वनाथ और वीरबाहु अपनी-अपनी राजधानी पहुँचे । विश्वनाथ का बेटा अब बोलने लग गया । उसने वैशाली के राजा से जो हुआ, सब बताया और कहा ''महाराज, आप किरणाक्षिणी के शिथिल आलय का पुनरुद्धार कीजिये और उनका आशीर्वाद पाइये । हमारे राज्य की जनता को उस देवी का दर्शन-भाग्य मिले तो आप की भी प्रसिद्धि चहों दिशाओं में व्याप्त होगी ।''

उदयपुर राज्य पहुँचने पर वीरबाहु को जब मालूम हुआ कि उसकी पत्नी गर्भवती हैं तो वह बेहद खुश हुआ । उसने अपने राजा सूर्यकितन से किरणाक्षिणी देवी के मंदिर के पुनरुद्धार का आग्रह किया । उसने भी अपने राजा से ऐसा ही बताया, जैसे विश्वनाथ ने अपने राजा से बताया था ।

दोनों राजा अपनी सेना के साथ उस शिथिल आलय के पास आये, जहाँ किरणाक्षिणी की मूर्ति थी । राजा चंद्रकांत ने पहले देवी की मूर्ति की पूजा की कि इतने में उदयपुर का राजा भी वहाँ आया । दोनों का जब आमना-सामना हुआ, तो दोनों असली बात जान गये ।

चंद्रकांत ने कहा ''महाराज सूर्यकेतु, यह अरण्य हमारे राज्य की सीमाओं के अंदर है। मैं देवी किरणाक्षिणी के लिए एक महोन्नत मंदिर बनाना चाहता हूँ।''

इसपर सूर्यकेतु ने मुस्कुराते हुए कहा ''महाराज, आप ग़लत बता रहे हैं। यह अरण्य हमारे राज्य की सरहदों के अंदर है। मेरा संकल्प है कि देवी के लिए एक अपूर्व मंदिर बनवाऊँ।''

यों दोनों राजाओं में विवाद उठ खड़ा हुआ। दोनों ने आवेश में आकर अपने म्यानों में से तलवारें निकालीं। अपनी सेना को उन्होंने यह कहकर सावधान कर दिया कि युद्ध के लिए सन्नद्ध हो जाएँ।

ठीक उसी समय रक्तपिपासी वहाँ आया। उसने जाना कि वहाँ क्या हुआ और क्या होनेवाला है। क्रोध से उसकी आँख एकदम लाल हो गयी। उसने कहा ''अरे मूर्खो, युद्ध का अर्थ है रक्तपात। तुम दोनों को अपने-अपने राज्य व अपनी-अपनी जनता की भलाई का ही ध्यान है। पूरी जनता के कल्याण के बारे में तुम सोचने को तैयार नहीं हो। देवी चाहती हैं शांति, लड़ाई-झगड़ा नहीं। तुम दोनों मिलकर मंदिर का पुनरुद्धार करो। ऐसा प्रबंध करो, जिससे तुम दोनों के राज्यों की जनता देवी का दर्शन कर सके। मेरी बात को नहीं मानोगे तो किरणाक्षिणी के हितबोध को भी मैं भुला दूँगा और तुम दोनों को अभी यहीं खा जाऊँगा।''

तभी किरणाक्षिणी प्रत्यक्ष हुई और कहा ''रक्तपिपासी, राक्षस होकर भी तुमने प्रमाणित कर दिया कि इन दोनों अधम मनुष्यों से तुम ही विवेकी हो। अभी तुम्हारी दूसरी आँख को भी दृष्टि प्रदान करती हूँ'' कहकर वह अदृश्य हो गयी।

चंद्रकांत और सूर्यकेतु बहुत ही लज्जित हुए। देवी ने उन्हें अधम कहा और राक्षस को उत्तम बताया, इसपर वे शरम के मारे गड़ गये। अब दोनों ने अपनी ग़लती जानी। दोनों ने मिलकर मंदिर का पुनरुद्धार किया और ऐसा प्रबंध भी किया, जिससे दोनों राज्यों की प्रजा देवी का दर्शन कर सके।

चन्दामामा
सुवर्ण रेखाएँ
साहस-भरी अंतरिक्ष-यात्रा
देवा अंतरिक्ष का योद्धा है। नौ ड्रागो निवास-स्थलों का विध्वंस करने वह अपने स्पेसक्राफ्ट क्सोरा में अंगारक ग्रह में पहुँचा।
तभी
अस्टिराइड्स ने हमें चोट पहुँचायी !
किसे नष्ट पहुँचा ?
कम ऊँचाई के स्टीरिंग को नष्ट पहुँचा।
देवा ने भली-भांति परिशीलन किया।
इसके नष्ट होने के पहले हम तीन ही बार मुड़ सकते हैं।
तीन घुमावों में नौ लक्ष्य हैं। उनका ध्वंस संभव है ?
कर सकते हैं।
कैसे?

सुवर्ण रेखाएँ
प्रश्नावली
1
अंगारक ग्रह के निवासियों के दुराक्रमण का चित्रण करते हुए १९३८ में अमेरीका में एक रेडियो नाटक का प्रसारण हुआ। इस नाटक ने लाखों श्रोताओं को भयभीत कर दिया। यह नाटक किस उपन्यास के आधार पर रचा गया? उस रचयिता का क्या नाम है?
2
चंद्रदेवी रोमन पुराणों की देवी थी। बालचंद्र धनुष व चाँदनी की किरणों के बाणों से यह सुसज्जित थी। उस प्राचीन देवी का क्या नाम है?
3
खगोल शास्त्र में 'वैट ड्वार्फ' किसे कहते हैं?

4

एक ग्रह को छोड़कर बाकी सारे ग्रह पश्चिम से पूरब की ओर घूमते रहते हैं। पूरब से पश्चिम की ओर घूमनेवाले उस ग्रह मात्र का क्या नाम है?

7

१९१० में एक पुच्छलतारा भूमि की ओर आता दिखायी पड़ा और चला गया। उसे देखकर दुनिया के बहुत-से प्रदेशों के लोग भयभीत हुए। उस पुच्छलतारे का क्या नाम है?

मुखौटे को साँचे में ढालिये

यहाँ दिखायी गयी पद्धति में अपने मुखड़े के लिए पर्याप्त मुखौटे को साँचे में आसानी में ढाल सकते हैं।

१. अपने मुखड़े के आकार में गोंद से साँचे में ढालिये और खूब सूखने दीजिये।

२. अखबार को छोटे-छोटे टुकड़ों में कतरिये। उन टुकड़ों को एक-एक करके उस साँचे पर गोंद से चिपकाइये। सूख जाने के बाद कागज़ के टुकड़ों पर एक और बार टुकड़ों को सावधानी से चिपकाइये। फिर से ऐसा ही कीजिये। यों चार परत चिपकाइये। इसके बाद हफ्ते तक सूखते रहने दीजिये।

३. मुखौटे की परत जब सूख जायेगी तब अंदर की गोंद के दोने को निकालिये। आँख, नाक व मुँह के लिए छेद कतरिये। अब मुखौटे पर जैसा रंग भरना चाहते हैं, भरिये। पलकों व मूँछों के लिए ऊन का उपयोग कर सकते हैं।

तीन आसान क्रमों में बिल्ली का चित्र खींचिये।
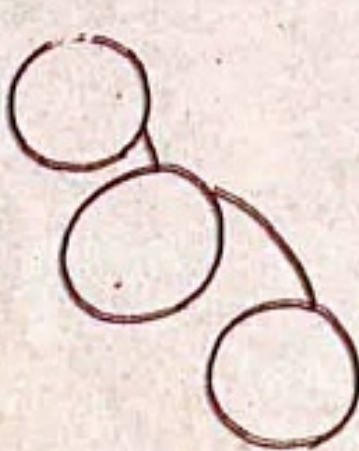
पाँडव जुए में हारे । वनवास करने वे द्रौपदी सहित हस्तिनापुर से अरण्यों की ओर निकले । इंद्रसेन आदि चौदह सेवक रथ लिये उनके साथ-साथ गये ।

रास्ते में वर्धमानपुर नामक गाँव से होकर जब जा रहे थे, तब हस्तिनापुर से कुछ लोग आये । उन्होंने कहा "धर्मराज, हम भी आपके साथ चलेंगे । हमें भी अपने साथ आने दीजिये । जहाँ आप हैं, वहीं सुख-शांति हैं । हम वहाँ रहने के लिए कदापि सन्नद्ध नहीं हैं, जहाँ आप नहीं हैं । हम जानते हैं कि आपकी अनुपस्थिति में वहाँ अधर्म होगा, अन्याय होगा, शिष्ट व्यक्तियों के साथ अनाचार होगा । हमें अपने साथ रहने की अनुमति दीजिये ।"

धर्मराज ने उन्हें समझाते हुए कहा "मैं तुम लोगों के भाई के समान हूँ । मेरी विनती पर ध्यान दीजिये । भविष्य में हमें जिन-जिन कष्टों का सामना करना पड़ेगा, उनकी कल्पना करके हमारे दादा भीष्म, हमारे पिता समान धृतराष्ट्र तथा हमारी माँ कुंती उनसे भी अधिक बहुत ही चिंतित हैं और होंगी । मैं जानता हूँ कि उनका दुख कितना गहरा होगा । आप लोग जाकर उन्हें सांत्वना दें तो हमारा शुभ होगा । उन्हें आपको सौंप रहा हूँ । आप बहुत दूर आ गये । कृपया अब लौट जाइये ।"

धर्मराज की बात वे टाल नहीं सके । पाँडवों की सहनशक्ति व विनय-गुणों की प्रशंसा करते हुए वे हस्तिनापुर लौट चले ।

फिर पाँडव रथों में बैठकर गंगा नदी के तट पर से होते हुए अरण्यों की तरफ़ बढ़े । सूर्यास्त तक वे एक बड़े वृक्ष के पास पहुँचे, जहाँ उस रात को वे ठहरे । अड़ोस-पड़ोस के गाँवों से बहुत-से ब्राह्मण आये और उन्हें अनेकों पुण्य कथाएँ

''मैं असहाय हूँ। मेरे भाई भी असहाय हैं। आपके लिए कंदमूल फल लाने के लिए मैं अपने भाइयों को कष्ट पहुँचा नहीं सकता'' धर्मराज ने कहा। ''हम अपनी आवश्यकताएँ स्वयं पूरी कर लेंगे। हम आत्मनिर्भर रहेंगे। हमारे कारण आपको कोई कष्ट नहीं पहुँचेगा। हमें चाहिये केवल आपका सत्संग।'' ब्राह्मणों ने कहा।

धर्मराज ने अपने पुरोहित धौम्य से कहा ''मुनीश्वर, ये ब्राह्मण मेरे साथ सब प्रकार के कष्ट झेलने के लिए सन्नद्ध हैं। मेरी बात सुनने तैयार नहीं हैं। आपको विदित ही है कि इस स्थिति में इनके पोषण का भार उठाना मेरे लिए साध्य नहीं। अरण्य में इनका पोषण कैसे हो पायेगा? क्या कोई उपाय है?''
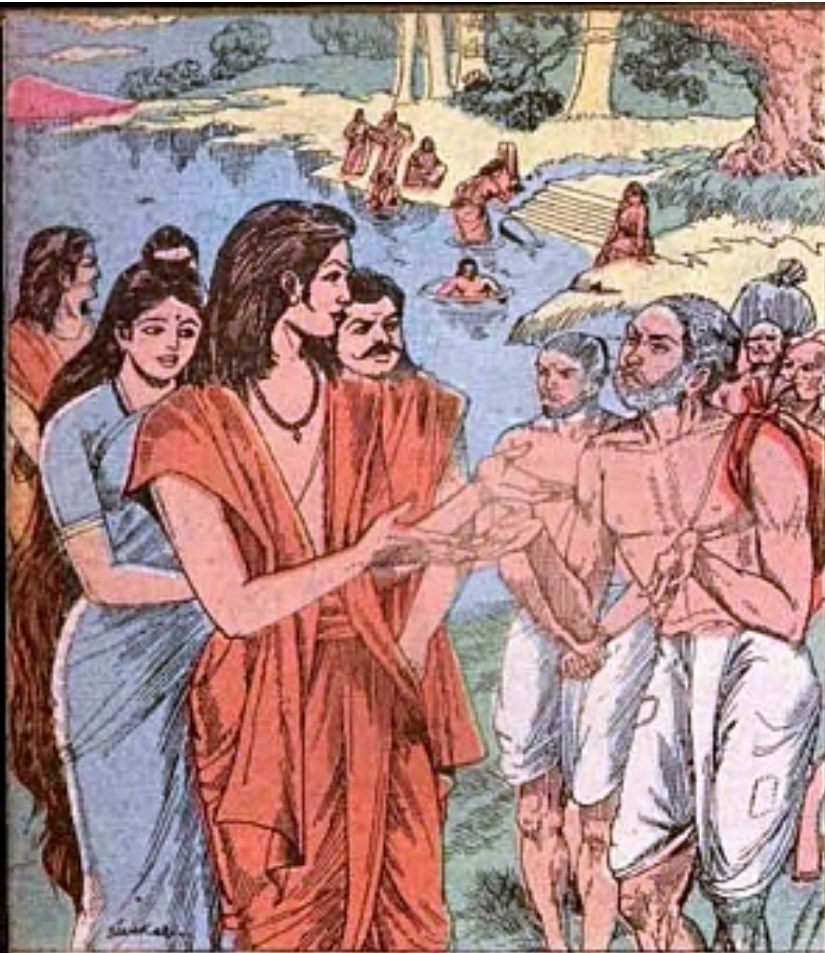
सुनायीं। यों वह रात उन्होंने वहाँ गुजारी। प्रात:काल उन्होंने गंगा में स्नान किया और अरण्यों की तरफ़ जाने लगे। कुछ ब्राह्मणों ने उनके साथ जाने का आग्रह किया, जिनकी वृत्ति भिक्षा थी।

धर्मराज ने उनसे कहा ''हमने सब कुछ खो दिया। नियम-बद्ध होकर हम अरण्यवास करनेवाले हैं। आप लोग भला अरण्यों में कैसे जी पायेंगे? हमारे कारण आपको कष्ट पहुँचे, यह हम सह नहीं सकते। आप कृपया अपने-अपने घर लौटिये।''

ब्राह्मणों ने जोर देकर कहा ''हम आपके साथ आना चाहते हैं, किन्तु आप मना कर रहे हैं। यह आपको शोभा नहीं देता।''

''धर्मराज, अन्न आदित्यमय है। तुम सूर्य की आराधना करो और उसकी महिमा से इन ब्राह्मणों का पोषण करो'' कहकर धौम्य ने धर्मराज को सूर्य स्तोत्र का उपदेश दिया।

धर्मराज ने कुछ दिनों तक सूर्य की निष्ठापूर्वक आराधना की। सूर्य प्रत्यक्ष हुए और एक तांबे का पात्र देते हुए कहा ''धर्मराज, यह अक्षय पात्र है। द्रौपदी कच्चे फलों व कंदों को इसमें रखेगी तो तुम्हें और तुम्हारे अतिथियों के लिए आवश्यक आहार इसमें लभ्य होगा।'' कहकर वे अदृश्य हो गये।

धर्मराज ने वह अक्षय-पात्र द्रौपदी को दिया। तब से कंद मूल उसमें रखे जाएँ तो अनेक प्रकारों का रुचिकर असीम आहार
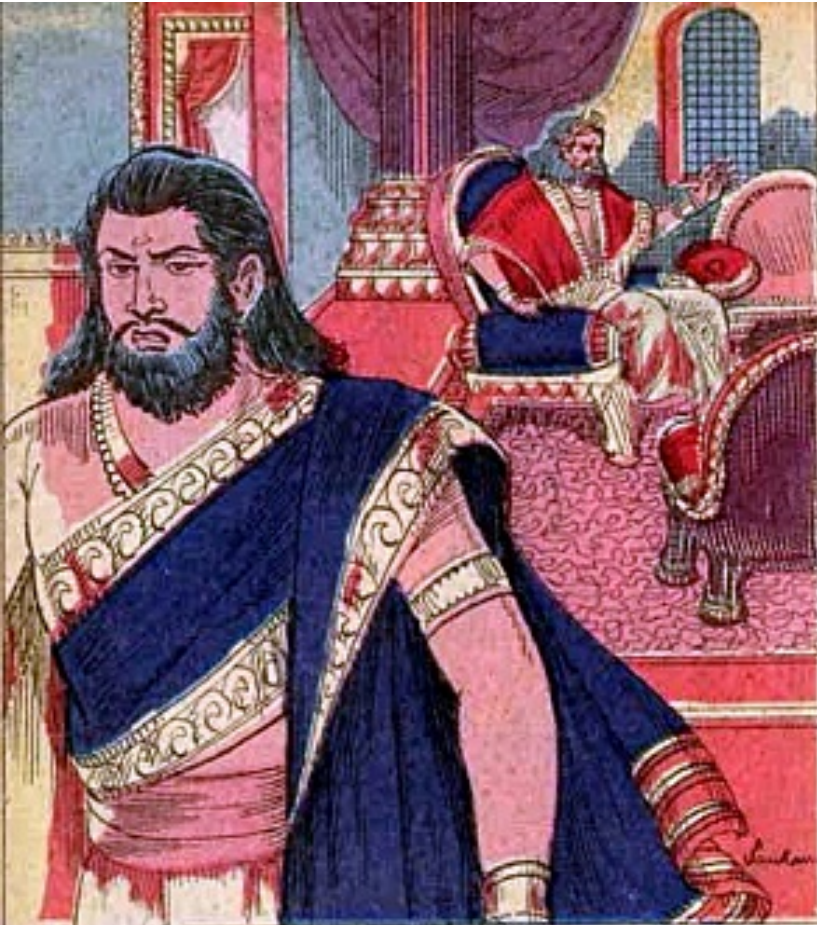
उपलब्ध होता था।

पाँडवों ने गंगा तट छोड़ दिया और पश्चिमी दिशा के अरण्यों से होते हुए आगे बढ़े। यमुना, दृषद्वती नदियों को लांघकर वे काम्यकवन में पहुँचे। वह बड़ा ही सुंदर प्रदेश था। वहाँ अनेकों मुनि रहते थे।

जब पाँडव काम्यकवन में थे, तब धृतराष्ट्र ने विदुर को बुलाया और कहा "विदुर, पाँडवों के वनवास पर चले जाने के बाद लोग हमसे दूर-दूर रहने लगे हैं। वे कहीं हमारा अपकार तो नहीं करेंगे? उन्हें अपना बनाने का कोई उपाय हो तो बताओ।" वह मन ही मन डरने लगा कि कहीं प्रजा उसके विरुद्ध विद्रोह तो नहीं करेगी। पाँडवों को वापस बुलाने के लिए उसपर दबाव तो नहीं डालेगी।

"राजन्, धर्म सबका मूल है। तुम धर्म का पालन करो। ऐसा करके पाँडवों और अपने पुत्रों की भी रक्षा करो। शकुनि ने पाँडवों को धोखा देकर उनका राज्य हड़प लिया। पाँडव तुम्हारे पुत्रों के निर्मूलन की शक्ति रखते हैं। धर्मराज्य का राज्य लौटावो। दुर्योधन, शकुनि, कर्ण आदि धर्मराज का प्रभुत्व स्वीकार करें, वे द्रौपदी व भीम से क्षमा माँगें। धर्मराज अवश्य उन्हें क्षमा करेगा। मेरा परामर्श पूछा, अतः मुझे जो अच्छा लगा, मैंने बताया।"

धृतराष्ट्र क्रोधित होकर बोला "अपने सगे पुत्रों को परायों के लिए कैसे त्यज सकता हूँ। तुम्हारा यों कहना क्या उचित है? मैं तुम्हारा कितना आदर करता हूँ, परंतु क्या लाभ? तुम्हारी वक्र बुद्धि क्योंकर छूटेगी। मेरे पुत्रों से तुम जलते हो। उनका शुभ नहीं चाहते। जब देखो, पाँडवों को उत्तम व महान कहकर उनका राग आलापते रहते हो। चाहते हो तो जाकर उन्हीं के साथ रहो। अगर तुम्हें वहाँ भी जाना नहीं है तो जाओ, जहाँ जाना चाहते हो।"

विदुर ने तुरंत रथ मंगाया और काम्यकवन निकल पड़ा, जहाँ पाँडव रहते हैं।

विदुर जब वहाँ पहुँचा, तब धर्मराज ब्राह्मणों के बीच बैठा हुआ था। उसने विदुर को आते हुए देखकर भीम से कहा "जुएँ में हमने अपने हथियार नहीं खोये। है ना? लगता है कि फिर से शकुनि और दुर्योधन ने जुआ खेलने के लिए निमंत्रण

देने विदुरश्री को भेजा है। नहीं तो जान-बूझकर भला विदुरश्री यहाँ क्यों आयेंगे? शायद वे समझते होंगे कि विदुरश्री के बुलाने पर हम आये बिना नहीं रहेंगे। जो भी हो, आगे मैं जुआ नहीं खेलूँगा। अर्जुन का गांडीव और तुम्हारी गदा को वे जुए में जीत जाएँगे तो युद्ध में हमारे जीतने की कोई आशा नहीं।''

इतने में विदुर आ ही गया।

धर्मराज आदि ने उठकर उसे प्रणाम किया और आसन पर बिठाया। उन्होंने विदुर के आने का कारण जानना चाहा। विदुर ने, धृतराष्ट्र का उससे परामर्श माँगना, अपना उत्तर और उससे क्रोधित होकर धृतराष्ट्र का उसे चले जाने को कहना आदि सविस्तार बताया। धर्मराज ने विदुर से कहा कि आप यहीं हमारे ही साथ रहकर हमें पग-पग पर न्याय-मार्ग सुझाते रहियेगा। विदुर जानता था कि धर्मराज यही कहेगा। उसे तो धृतराष्ट्र के साथ रहना खटक भी रहा था क्योंकि स्वार्थ ने उसे लपेट लिया। पुत्र-मोह ने उसे अविवेकी बना दिया।

धृतराष्ट्र को मालूम हुआ कि विदुर काम्यकवन में पाँडवों के साथ रह रहा है। यह जानकर तो धृतराष्ट्र बेहोश-सा हो गया। क्योंकि उसे डर लगने लगा कि विदुर की सलाहों से पाँडवों का लाभ ही लाभ होगा। थोड़ी देर में संभलकर उसने संजय से कहा ''संजय, विदुर मेरा भाई है, मेरा स्नेह-पात्र है। बहुत ही बुद्धिमान है। मैंने थोड़ी-सी कठोरता बरती तो रूठकर

काम्यकवन चला गया और पाँडवों के साथ रहने लगा। उसकी अनुपस्थिति में मेरी बुद्धि स्तंभित हो गयी है। तुम शीघ्र जाओ और विदुर को ले आओ।''

संजय काम्यकवन आया और आने का कारण धर्मराज को बताया। फिर उसने विदुर से कहा ''महानुभाव, आपके चले आने के बाद धृतराष्ट्र के प्राण छटपटा रहे हैं। आपको ले आने मुझे भेजा है। आप आइये और उन्हें जीवन प्रदान कीजिये।''

धर्मराज की अनुमति लेकर विदुर, संजय के साथ हस्तिनापुर आया। धृतराष्ट्र ने, विदुर का आलिंगन किया और कहा ''तुम उत्तम व्यक्ति विशेष हो। मेरी बात मानकर लौटे। इतने दिनों तक मेरी बुद्धि सठिया गयी। क्षमा करो।''

विदुर ने कहा "तुम्हारी आज्ञा का पालन किया। मैंने जो भी कहा, तुम्हारे भले के लिए ही कहा। दोनों मेरे अपने हैं, समान हैं। उनकी स्थिति दीन है, इसलिए उनसे मेरी सहानुभूति है और ऐसा होना न्याय-संगत भी है।"

विदुर के लौटने के बाद दुर्योधन ने, कर्ण, शकुनि, दुश्शासन को बुलाया और उनसे कहा "फिर विदुर आ गया। पता नहीं, वह पांडव-पक्षपाती पिताश्री को क्या-क्या सलाहें देगा? पाँडव लौटें तो मैं आत्महत्या कर लूंगा।"

शकुनि ने दुर्योधन से कहा "मूर्ख की तरह बकवास मत कर। तुम्हारे पिता बुलायें भी तो पाँडव नहीं लौटेंगे। अगर आयें तो धर्मराज को जुआ खेलने मजबूर करेंगे और उन्हें दीन, भिखमंगे बनाकर भेज देंगे।"

कर्ण ने ताड़ लिया कि दुर्योधन को शकुनि की बातों में कोई मज़ा नहीं आया तो उसने कहा "हम युद्ध-सन्नद्ध होकर अभी निकल पड़ेंगे और पाँडवों को मारकर लौटेंगे। जब तक वे जीवित हैं, तब तक वे हमारे शत्रु ही हैं। अब नहीं मार पायेंगे तो शायद यह कभी संभव न हो।"

सबको कर्ण की ये बातें सही लगीं। सैन्य-सहित पाँडवों पर आक्रमण करने का उन्होंने निश्चय किया।

ठीक उसी समय व्यास धृतराष्ट्र के पास आये और कहा "तुम्हारे पुत्रों ने मायावी जुए में पाँडवों को हराया और उन्हें राज्य से वंचित कर दिया। मेरी दृष्टि में उनके प्रति यह अन्याय है। उन्हें अरण्यों में भेजना पाप है। उन पाँडवों पर आक्रमण करने तुम्हारे पुत्र निकल रहे हैं। अगर जाएँगे तो अपमानित होकर लौटना निश्चित है, तथ्य है। अपने बेटे के इस प्रयत्न को रोको। तुम, भीष्म, द्रोण, विदुर क्यों ऐसे अधर्म को देखते हुए चुप्पी साधे बैठे हो?"

उत्तर में धृतराष्ट्र ने कहा "महात्मा, हम नहीं चाहते कि ऐसा हो। किन्तु मेरे पुत्र-प्रेम की बलहीनता का लाभ उठाकर दुर्योधन मनमाना कर रहा है। आप ही उसे सन्मार्ग पर लाइये।"

"मुझे जाना है। यहाँ मैत्रेय नामक मुनि आनेवाले हैं। वही तुम्हारे पुत्र को समझायेंगे" कहकर व्यास चले गये।

व्यास के कहे अनुसार ही मैत्रेय महामुनि कुछ दिनों के बाद हस्तिनापुर आये।

धृतराष्ट्र से मिले। धृतराष्ट्र ने उनका स्वागत सत्कार करके पूछा "महात्मा, आप कहाँ से आ रहे हैं?"

"तीर्थयात्राएँ करता हुआ मैं काम्यकवन गया। वहाँ पाँडवों के साथ कुछ दिन रहा। तुम्हें देखने यहाँ चला आया। पाँडव कंद मूल फल खा रहे हैं, वल्कल वस्त्र पहन रहे हैं, नाना प्रकार के कष्ट झेल रहे हैं। उनके कष्टों का क्या कहूँ" मैत्रेय ने अपना दुख व्यक्त किया।

धृतराष्ट्र ने तक्षण ही पूछा "मुनीश्वर, पाँडव सुखी व कुशल हैं ना? नियमों का उल्लंघन करके वापस तो आना नहीं चाहते ना?"

"लोक उलट-पुलट हो जाएँ, पर वे नियमों का उल्लंघन नहीं करेंगे। ऐसे सत्पुरुषों के साथ तुम्हारे पुत्र ने अन्याय किया। मैंने जुए के बारे में पूरा वृत्तांत सुन रखा।" फिर मैत्रेय ने दुर्योधन से कहा "तुममें थोडी-सी भी सद्‌बुद्धि हो तो पाँडवों का स्नेह पाओ। वे महाशूर हैं। काम्यकवन में भीम ने किम्मीर नामक भयंकर राक्षस को मार डाला। तुम्हें तो मालूम ही है कि उसने बक, डिंडिबु, जरासंध तक को मार डाला। द्रुपद जैसे शक्तिशाली राजा उनके साथ हैं। कृष्ण स्वयं उनके पक्ष में है। ऐसे वीर-शूरों से तुम क्यों शत्रुता मोल लेते हो?"

दुर्योधन ने मुनि की बातों का मज़ाक उड़ाते हुए अपने हाथ से अपनी जाँघ को पीटते हुए, हाथ उठाकर अपने पैर की अंगूठी से भूमि को रौंदा। मैत्रेय इससे क्रोधित हो गया और शाप दिया कि भीम तुम्हारी इन जाँघों को युद्धक्षेत्र में तोड़ दे।

धृतराष्ट्र ने घबराकर कहा "हम पर दया कीजिये। ऐसा न होने दीजिये।" मैत्रेय ने कहा "इसका एक ही मार्ग है। तुम्हारा पुत्र पाँडवों से बैर न रखे और उनसे स्नेहपूर्वक रहे।"

धृतराष्ट्र ने जानना चाहा कि भीम ने किम्मीर नामक राक्षस को कैसे मारा?

"मैं नहीं बताऊँगा। विदुर से पूछो तो वह बतायेगा। अच्छा, मैं चला," कहकर मैत्रेय महामुनि वहाँ से चला गया।

"भीम ने किम्मीर को मार डाला?" चकित होता हुआ, अपने आप बड़बड़ाता हुआ दुर्योधन सभा-मंदिर से बाहर आ गया।

उत्तम अभिनेता

अवंती राज्य में दशहरे के उत्सव बहुत बड़े पैमाने पर मनाये जाते थे। उन दसों दिनों में उत्साही कलाकार नाटकों का प्रदर्शन करते थे। नाटकों की समाप्ति के उपरांत उत्तम अभिनेता का चुनाव होता था। उसे पुरस्कार दिया जाता और साथ ही राजा के आस्थान में अच्छी नौकरी भी दी जाती थी। न्याय-निर्णायक होता था, सभापति महामंत्री।

एक बार प्रदर्शित नाटकों में तीन कलाकारों ने उत्तम अभिनय प्रदर्शित किया। संयोगवश तीनों ने राजकुमारों का पात्र निभाया। पहला, राजा के साले का निकट रिश्तेदार था। उसका नाम था रविवर्मा। बिना किसी त्रुटि के उसने अपना पात्र निभाया। दूसरा, सेनाधिपति का बेटा था। उसका नाम था शशिकांत। एक ग़लती उसने की और वह दूसरे स्थान पर रहा। तीसरा जयदेव एक किसान का बेटा था। दो ग़लतियाँ उसने कीं और वह तीसरे स्थान पर रहा।

सबने सोचा कि रविवर्मा उत्तम अभिनेता चुना जायेगा। किन्तु न्याय-निर्णय सभा ने जयदेव को उत्तम अभिनेता घोषित किया।

पुरस्कारों के प्रदान के बाद राजा ने मंत्री से कहा "मंत्रिवर, उत्तम अभिनेता के चुनाव ने मुझे आश्चर्य में डाल दिया।"

तब मंत्री ने कहा "पहले दोनों राजकुमारों ने हाव-भाव प्रदर्शित करने में कोई ठोस प्रयत्न नहीं किया। इसका कारण है, वे पात्र उनके स्वभाव व उनके निजी जीवन के प्रतिरूप हैं। उन्हें इसकी ज़रूरत भी नहीं पड़ी। किन्तु किसान के बेटे जयदेव ने राजकुमार का पात्र अदा करने के लिए विशिष्ट प्रयत्न किया और रंगमंच पर उसका अभिनय अद्भुत लगा।"

-राम भरोसे
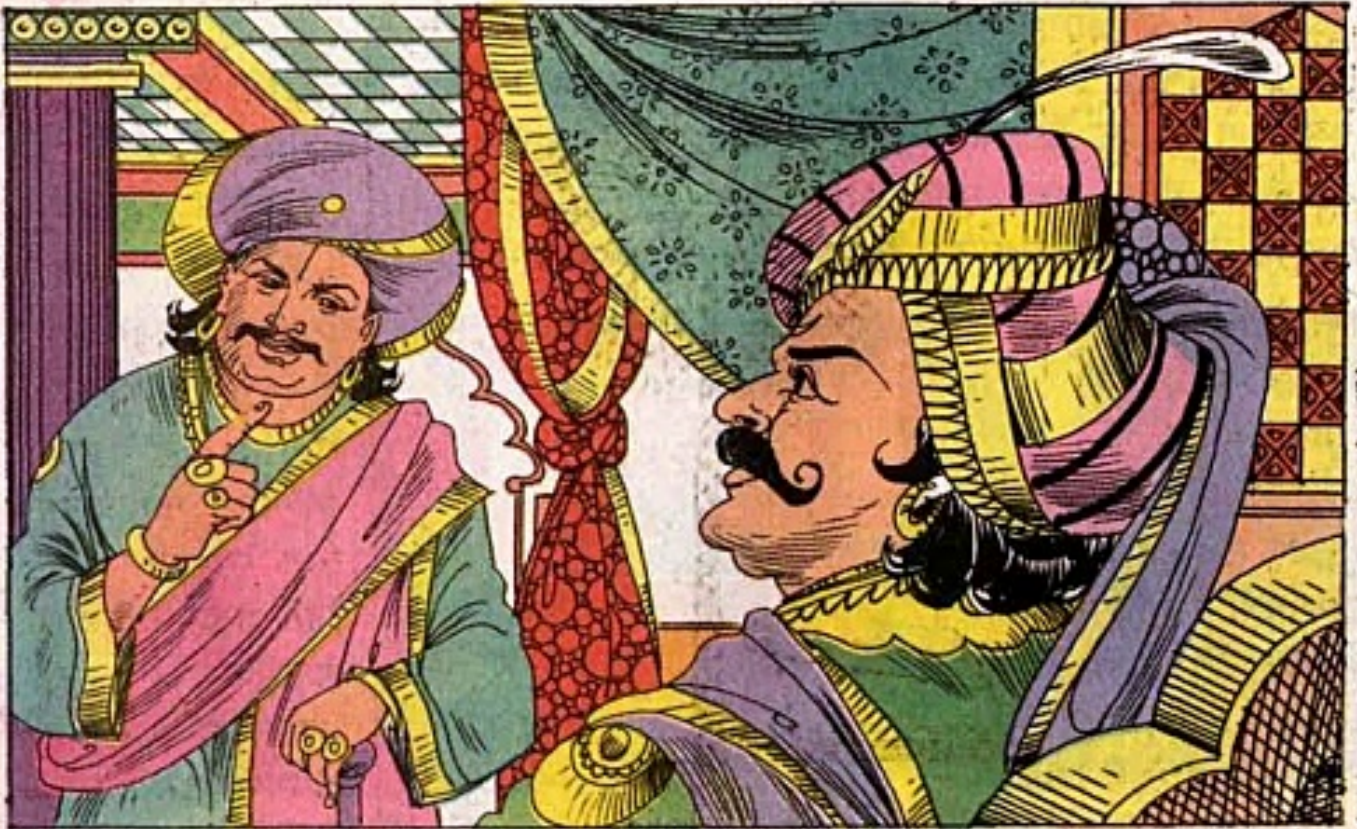
ताड़ का पेड़

कागज़ के आविष्कार के पहले चमड़े पर व ताल-पत्रों पर लिखा करते थे। हमारे देश में, नेपाल व टिबेट जैसे देशों में प्राचीन पवित्र ग्रंथ लाल-पत्रों पर ही लिखा करते थे। वही पद्धति अब भी नेपाल में चली आ रही है। हमारे देश के कुछ ग्रंथालयों में ताल-पत्रों पर लिखे ग्रंथों को सुरक्षित रखा गया है। मद्रास विश्वविद्यालय के ओरियंटल म्यानुस्क्रिप्ट पुस्तकालय में तथा तंजाऊर में स्थित सरस्वती महल पुस्तकालय में भी ये ताल-पत्र ग्रंथ हैं। ताल-पत्रों पर लिखे जानेवाले अक्षरों को हज़ारों सालों के बाद भी नष्ट नहीं पहुँचा, जो बहुत ही विशिष्ट बात है। इन ताल-पत्रों पर चित्र भी खींचे जाते हैं।

ताड़ के पेड़ को तमिल में 'पनै', मलयालम में 'पना' हिन्दी में 'ताल' गुजराती में, मराठी में 'ताड़', बंगाली में 'तार', तेलुगु में 'ताडिचेट्टू' कहते हैं। कलकत्ते के सुप्रसिद्ध तारकेश्वरालय में ताड़ के पेड़ के तने मोड़-कर शिवलिंग की प्रतिष्ठापना की गयी। इसीलिए यह मंदिर तारकेश्वरालय कहा जाने लगा।

हमारे देश में ताड़ के पेड़ रेतीली ज़मीन में अच्छी तरह पनपते हैं। गंगा तट से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक ताड़ के पेड़ फैले हुए हैं। इस पेड़ के बीच की माप होती है ६०-७० से.मी. ३०-४० तक की ऊँचाई होती है। लगता है, पत्तों ने अपने सिर पर फैला लिया हो; तालवृंत का पंखा हो। इन पत्तों का उपयोग घरों की छतों के लिए होता है। इससे टोकरियाँ व चटाइयाँ बनती हैं। पंखे व छतरियाँ बनायी जाती हैं। ताड़ के रेशों से धागे बनते हैं। ताड़ से 'नीरा' नामक पेय निकाला जाता है, जिसे पीते हैं। ताड़ के कच्चे फल का गूदा बहुत ही स्वादिष्ट होता है। इससे ठंडक भी पहुँचती है।
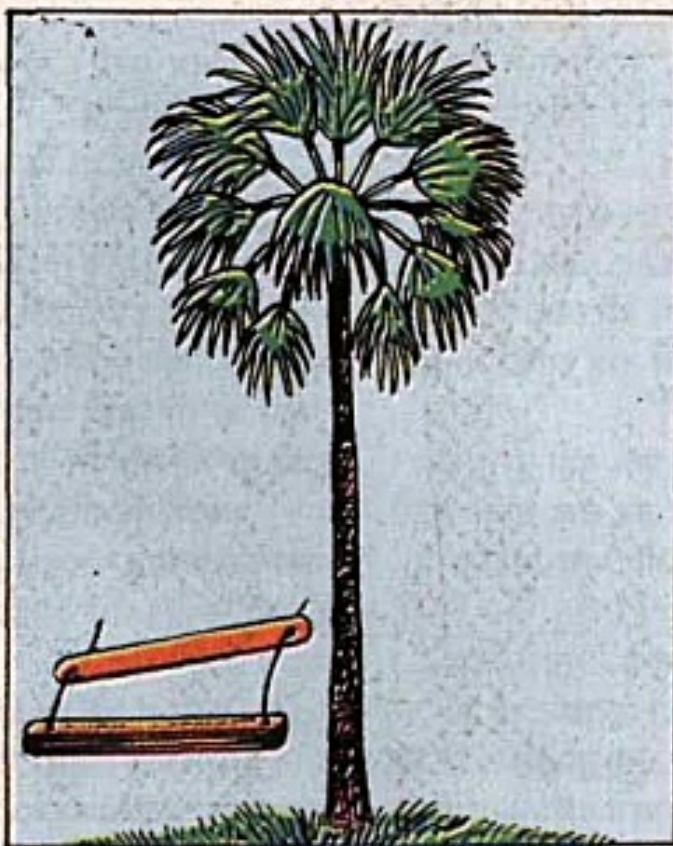
हमारे देश के ऋषि

उपमन्यु

उपमन्य अयोध्या के धौम्य के शिष्य थे। विद्याभ्यास की समाप्ति के बाद भी गुरु ने, शिष्य से घर लौटने के लिए नहीं कहा। उल्टे उसे आश्रम की गायों को चराने का कार्य-भार सौंपा गया।

अपने गुरु के आदेश के अनुसार उपमन्य गायों को चराने के लिए खुले मैदान में ले गये। चराने के बाद संध्या को आश्रम लौटे। तब गुरु ने उनसे पूछा "पूरा दिन तुमने मैदान में ही बिता दिया पर जब भूख लगी तो क्या किया ?"

"जब गायें चर रही थीं तब पड़ोस के एक गाँव में गया और भिक्षा माँगकर अपनी भूख मिटा ली" उपमन्य ने कहा।

गुरु ने कहा "गायों को इस प्रकार छोड़कर जाना नहीं चाहिये।" कुछ दिनों के बाद गुरु ने पूछा "अब भूख लगती है तो क्या करते हो?"

"गायों को आश्रम में ले आने के बाद गाँव में जाता हूँ और भिक्षा माँगता हूँ" उपमन्य ने कहा।

"सायंकाल के समय गृहस्थियों को कष्ट पहुँचाना नहीं चाहिये। अलावा इसके, जो भी तुम्हें भिक्षा में प्राप्त होती है, वह आश्रम की है। उसपर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं" गुरु ने कहा।

यों कुछ दिन बीत गये। गुरु ने पुनः वही प्रश्न किया।

"गायों का दूध पीकर भूख मिटा रहा हूँ" शिष्य ने कहा। गुरु ने कहा "मैंने तो तुम्हें इसकी अनुमति नहीं दी।"

चंद दिनों के बाद गुरु ने पुनः वही प्रश्न पूछा। "बछड़े जब दूध पी लेते हैं, तब बाद उनके मुँहसे बहनेवाले झाग को पीता हूँ और भूख मिटाता हूँ" शिष्य ने कहा।

"ऐसा करना भी अनुचित है" गुरु ने कहा।

दूसरे दिन सायंकाल को गायें आश्रम पहुँचीं। पर उपमन्य उनके साथ नहीं लौटा। गुरु अपने कुछ शिष्यों को लेकर उसको ढूँढने गये। गुरु ने देखा कि उपमन्य

एक गढ़े में गिरा पड़ा हुआ है और कराह रहा है। उसको ऊपर उठाने के बाद गुरु ने उससे पूछा कि गढ़े में क्यों गिर गये। शिष्य ने कहा "भूख सह नहीं सका, इसलिए पेड़ में लटकते हुए एक फल को तोड़कर खाया। लगता है कि वह विष फल है। उसे खाने के बाद आँखों में देखने की शक्ति नहीं रही।"

गुरु ने सलाह दी कि दृष्टि प्राप्त करने अश्विनी देवताओं की पूजा करो।

उपमन्य की प्रार्थना पर अश्विनी देवता प्रत्यक्ष हुए और उन्हें आहार प्रदान किया। किन्तु उपमन्य ने उस आहार को छूने से मना कर दिया और उनसे कहा "मुझे जो भी भिक्षा प्राप्त होती है, मुझे उसे प्रथम अपने गुरु को समर्पित करना होगा।"

"तुम्हारी गुरुभक्ति असाधारण है। तुम्हें साधारण बाह्य दृष्टि के साथ-साथ अत्यद्भुत अंतरदृष्टि भी दे रहे हैं" यों उन्होंने उसे वर दिया और अश्विनी देवता अदृश्य हो गये।

पूर्व काल में गुरु, शिष्यों की भलाई की कामना करते हुए अनेकों प्रकारों से उनकी परीक्षा लेते थे। उपमन्य का उदारहण इसका साक्षी है।

क्या तुम जानते हो?

१. जानते हो कि सर रोजर बानिस्टर कैसे प्रसिद्ध हुए?
२. अंतरिक्ष के यात्री व्योमगामियों को आकाश नील नहीं दिखता बल्कि किसी दूसरे रंग में दिखता है। वह कौन-सा रंग है ?
३. 'लाल ग्रह' किसे कहते हैं ?
४. कठपुतलियों का प्रारंभ कहां से हुआ ?
५. आगरे का प्रबंध किसने किया और कब ?
६. रजतोत्सव का मतलब है, पच्चीस सालों की समाप्ति का उत्सव तो फिर 'पेपर यानिवर्सरी' किसे कहते हैं?
७. जिप्सियों की भाषा क्या है?
८. बाटिक शैली के चित्र किस देश में शुरु हुए?
९. १९८१ के पहले टेबल टेन्निस का दूसरा नाम था। तब उसका क्या नाम था?
१०. रक्त को चार भागों में विभाजित करते हैं। वे कौन-से हैं?
११. सोना, वज्र वैडूर्य जैसे रत्नों की परख का मानदंड क्या है?
१२. अब डाक की पेटियों का रंग लाल है। पहले इसका रंग दूसरा ही था। वह रंग क्या था?
१३. केवल एक संख्या को छोड़कर शेष सबों को रोमन पद्धति में लिख सकते हैं। वह संख्या कौन-सी है ?
१४. जीब्राओं की प्रत्येकता क्या है?
१५. सफेद हाथी कहाँ हैं ?
१६. अटलांटिक पर अकेली ही हवाई जहाज चलानेवाली साहसी युवती का क्या नाम है?

उत्तर

१. पहले पहल, चार ही मिनिटों में, एक मील की दूरी दौड़कर पार की।
२. ऊदा
३. अंगारक ग्रह
४. ईजप्ट, भारत
५. सिकिंदर लोडी, १५०६ में
६. प्रथम वार्षिकोत्सव
७. रोमनी
८. इंडोनेशिया
९. पेंग-पांग
१०. ए.बि.ओ.ए.बि
११. कारेट
१२. हरा
१३. शून्य
१४. किन्ही दो जीब्राओं पर एक ही प्रकार की लकीरें नहीं होतीं।
१५. सियाम (अब का थायलांड)
१६. अमीलिया एर्वार्ट, १९२८ में

सुवर्ण रेखाएँ - प्रश्नावली - ३ के समाधान

१. अहिंसक

२. खरगोश। आस्ट्रेलिया में दूर से आये खरगोशों की संख्या बहुत ही बढ़ गयी। वे पशुओं और भेड़-बकरियों के लिए पनपायी गयी घास खा जाते थे। वहाँ के किसान उनसे तंग आ गये।

३. टिप्पु सुल्तान

४. तीन। पहला सफ़ेद हुआ तो दूसरा काला होगा। तीसरे से तक जोड़ी बनती है।

५. सोम को पहले हाथी को नाव में खड़ा करना है। पानी में नाव के डूबने के समतल को ठीक तरह से याद रखना है। फिर उसे चाहिये कि उसी समतल के अंश तक नाव डूबे, नाव में इतनी रेत भरनी चाहिये। फिर उसे चाहिये कि अपने 'वेयिंग मिशन' से रेत के वज़न को तोले। तब उसे हाथी का वज़न जानने में आसानी होगी।

६. पहले तोप के की गोलों का तीन-तीन, दो के अनुसार तीन ग्रूपों में विभाजन करना होगा। अब प्रथम दोनों ग्रूपों को तराजु के अलग-अलग पलड़ों में रखकर तोलना चाहिये। अगर दोनों ग्रूप एकसमान तोल के हों तो बाक़ी दोनों गोलों को अलग-अलग पलड़ों मे रखकर तोलिये तो कम वज़नवाले गोले का पता लग जायेगा। अगर पहले दोनों ग्रूपों का वज़न एकसमान न हों तो उनमें से कम वज़न के तुले दो गोलों को लेकर अलग-अलग पलड़ों में रखें तो भेद मालूम हो जायेगा।

७. पाँच कतारों में दस कपाल
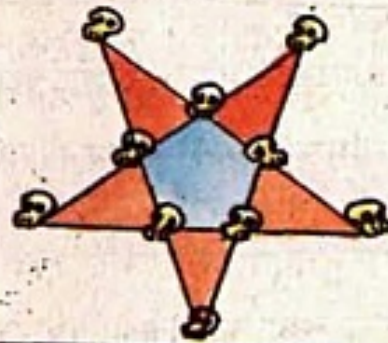
मारीच की चतुराई

बहुत पहले की बात है। चंद्रसेन त्रिपुर देश का राजा था। वह बहुत ही अच्छा शासन-दक्ष था। राज्यों के नगरों व ग्रामों में अधिकारियों की नियुक्ति ही नहीं करता था बल्कि चार सालों में एक बार उनकी तब्दीलियाँ भी करते रहना उसकी पद्धति थी। यही नहीं, अधिकारियों के विरुद्ध कोई शिकायत हो तो खुद सुनता था। फ़रियादी राजा से खुद मिल सकते थे और अपनी फ़रियाद सुना सकते थे।

त्रिपुर देश में ऐरावत नामक एक गाँव है। उस गाँव के सब लोग पढ़े-लिखे, होशियार और समर्थ थे। चंद्रसेन ने, विलंब नामक एक व्यक्ति को गाँव का अधिकारी नियुक्त किया। विलंब अहंकारी था। सब पर अपना रौब जमाता था। वह प्रजा की इच्छाओं के अनुसार नहीं, अपनी इच्छाओं के अनुसार शासन चलाता था।

ऐरावत के ग्रामवासियों को उसके काम करने का तरीका अच्छा नहीं लगा। गाँव के सबों ने आपस में चर्चाएँ कीं और सुबाहू नामक ग्रामीण को अपना नेता चुना। गाँव के पक्ष में सुबाहू विलंब से बातें करता था। गाँव के इस नेता का कुछ समय तक विलंब आदर करता रहा।

सुबाहू निस्संकोची व सच्चा आदमी था। कड़ुवी बात कहने में भी वह आनाकानी नहीं करता था। विलंब की गलती पर उँगली उठाने में वह हिचकिचाता नहीं था। इससे विलंब भड़क उठा। सुबाहू को वह तरह-तरह से सताने लगा।

कुछ समय बाद विलंब ने, सुबाहू को ग्राम-बहिष्कार की आज्ञा दी। गाँव की पूरी जनता ने इसका विरोध किया। उन्होंने सुबाहू का समर्थन किया और विलंब को ही गाँव से चले जाने को कहा। विलंब ने सेना भेजने

प्रफुल चंद्र

राजा को संदेश भेजा। विषय की जानकारी पाने राजा स्वयं ऐरावत गाँव आया।

सच्चाई जानकर राजा ने विलंब को सावधान किया। विलंब डर गया और राजा को आश्वासन दिया कि आगे से ऐसी ग़लतियाँ नहीं दुहराऊँगा। सुबाहु ने उसके आश्वासन को मानने से इनकार कर दिया। उसने हठ पकड़ा कि विलंब की जगह पर एक नया अधिकारी नियुक्त हो।

"विलंब को चार सालों तक नियुक्त किया। अब दो ही साल पूरे हो चुके हैं। दो और साल उसे यहाँ रहने दीजिये" चंद्रसेन ने ग्रामीणों से कहा।

सुबाहु ने अपनी दलील पेश करते हुए ग्रामीणों की तरफ़ से कहा "प्रभु, विलंब जैसे अधिकारी को अपने शासन-काल में ऐसी ग़लतियाँ करनी नहीं थीं। गाँव के सब लोग पढ़े-लिखे हैं। इसीलिए हम विरोध कर पाये। कितने ही गाँवों में अधिकारियों के अन्यायों को ग्रामीण सह रहे हैं। अगर आप विलंब को माफ़ कर देंगे तो बाक़ी अधिकारियों के हौसले बढ़ जायेंगे। वे ऐसी ही ग़लतियाँ करते रहेंगे और आपसे क्षमा-भिक्षा माँगकर अपने पद संभालते रहेंगे। आप अगर चाहते हों कि आगे से अधिकारी ऐसी गलतियाँ न करें तो विलंब को तुरंत पद से हटा दीजिये। इससे अधिकारी ग़लती करने का साहस भी नहीं करेंगे।"

राजा को उसकी बातें सही लगीं। उसने विलंब को अविलंब पद से हटा दिया और नये ग्रामाधिकारी की खोज में लग गया। पर ऐरावत गाँव के बारे में विलंब ने बहुत दुष्प्रचार किया। इससे लोगों को लगने लगा कि वहाँ की जनता दुष्ट है, आतंकवादी है। कोई भी उस गाँव का अधिकारी बनकर जाने के लिए तैयार नहीं था।

राजा को इस समस्या का परिष्कार नहीं सूझा। सुबाहु को उसने अपने यहाँ बुलवाया और उससे कहा "तुम्हारे गाँव की जनता ने तुम्हें नेता चुना। तुम्ही ग्रामाधिकारी की जिम्मेदारी संभालो तो अच्छा होगा।"

सुबाहु ने 'न' के भाव में अपना सर हिलाते हुए कहा "प्रभु मुझे क्षमा करें। ग्रामाधिकारी के अन्यायों का विरोध करने के लिए मैं नेता चुना गया हूँ। अब अगर मैंने ग्रामाधिकारी का पद संभाला तो मुझपर स्वार्थी होने की मोहर लग जायेगी। लोग कहेंगे कि ग्रामाधिकारी बनने के लिए मैंने

यह बखेड़ा खड़ा कर दिया। मैं ही नहीं, बल्कि मेरे गाँव के किसी को भी इस पद से लगाव नहीं है। हमें छोड़कर, आप किसी को भी अधिकारी नियुक्त कर सकते हैं और हमें कोई एतराज नहीं है। हमारी पूरी सहमति है। पर, अधिकारी ने ग़लत क़दम उठाया तो हाथ पर हाथ धरे चुप नहीं बैठूंगा। तमाशा देखते रहनेवालों में से मैं नहीं हूँ।''

राजा ने उसकी निस्वार्थता की प्रशंसा की और उसे भेज दिया। महारानी के दूर का रिश्तेदार था मारीच। राजा ने मारीच से कहा ''तुम्हें ऐरावत गाँव का ग्रामाधिकारी नियुक्त कर रहा हूँ। उस गाँव का नेता है, सुबाहु। तुम्हारा सलूक उससे अच्छा रहा, तो तुम्हें वहाँ कोई तक़लीफ़ नहीं होगी।''

मारीच शिक्षित था। अक़्लमंद और क़ाबिल था। वह पद से चिपककर बैठना चाहता भी नहीं था। किन्तु राजा की बात को वह टाल नहीं सका। लाचार होकर मानना ही पड़ा।

मारीच के शासन-काल में ऐरावत की पर्याप्त अभिवृद्धि हुई। मारीच और सुबाहु घने दोस्त हो गये।

देखते-देखते तीन साल हो गये। एक दिन राजा ने मारीच को अपने यहाँ बुलवाया और कहा ''एक और साल के अंदर तुम्हारी मियाद पूरी होनेवाली है। कोई योग्य व्यक्ति हो तो बताओ, अन्यथा मैं ही सही व्यक्ति को नियुक्त करूँगा।''

मारीच ने विनयपूर्वक कहा ''प्रभु, मेरे शासन-काल में ऐरावत की प्रजा सुखी व समृद्ध है। मुझे लगता है कि चार और साल मैं ही रहूँ तो अच्छा होगा। उस गाँव व ग्रामीणों के प्रति मुझमें आदर-भाव बढ़ गया।''

चंद्रसेन ने कहा ''तुम्हें इस पद के प्रति पहले कोई लगाव नहीं था। थोड़े समय तक इस पद को संभाला, इसलिए उसे छोड़ने के लिए तुम तैयार नहीं हो। ये उत्तम व्यक्तियों के लक्षण नहीं हैं। चार सालों की अवधि के नियम को मैं तोड़ना नहीं चाहता। किसी भी हालत में उसे अमल में लाऊँगा।''

तब मारीच ने कहा ''प्रभु, मैंने जो उचित समझा, बताया। मुझे ऐसे तो इस पद का कोई मोह नहीं। पद का जिन्हें मोह है, वे ऐरावत गाँव में टिक नहीं सकते। अगर मैं चाहूँ तो अपने पद पर बने रहने के

लिए आप ही को बाध्य कर सकता हूँ। आप ही में वह तब्दीली ला सकता हूँ। जो भी हो, आपकी आज्ञा मेरे लिए शिरोधार्य है।'' कहकर वह ऐरावत लौट गया।

उस दिन से मारीच का बरताव बदल गया। वह सुबाहु पर अपना अधिकार-दर्प दर्शाने लगा। जो भी सुबाहु करता, उसमें ग़लतियाँ ढूँढ़ने लगा। उसे तरह-तरह से सताने लगा।

सुबाहु कुछ कम नहीं था। चुप बैठकर तमाशा देखनेवालों में से नहीं था। उसने ग्रामीणों को मारीच के ख़िलाफ़ भड़काया। किन्तु मारीच ग्रामीणों से बड़े ही विनय से पेश आता और मीठी-मीठी बातें करता। सिर्फ़ सुबाहु से उसका व्यवहार बड़ा कड़ुवा होता था।

तंग आकर सुबाहु ने राजा से शिकायत की। राजा स्वयं ऐरावत आया। सुबाहू ने राजा से कहा कि मारीच तुरंत पद से निकाल दिया जाए।

राजा ने उससे पूछा ''मारीच ने ऐसी कौन-सी ग़लती कर दी?'' ''मैं जनता का नेता हूँ, इसपर वह मुझसे जल रहा है। मेरे साथ अनादर-भरा व्यवहार कर रहा है।''

मारीच ने इसका जवाब देते हुए कहा ''प्रभु, अपने नेता होने के तैश में यह मेरे साथ दुर्व्यवहार कर रहा है। 'जैसे को तैसा', इसी सिद्धांत के आधार पर मैं भी उससे पेश आ रहा हूँ। और यह बिल्कुल व्यक्तिगत है। अगर मेरे घमंड का या मेरे बुरे व्यवहार का कोई सबूत हो तो तुरंत अपने पद से इस्तीफा देने के लिए तैयार हूँ। आप किसी से भी पूंछ सकते हैं।''

चंद्रसेन ने लोगों से बातें की और जान गया कि उन दोनों की समस्या बिल्कुल व्यक्तिगत है।

''आप दोनों अच्छे है, क़ाबिल हैं। आप दोनों के बीच मनमुटाव हो तो अपने तक ही सीमित रखिये। गाँव को नष्ट न पहुँचाइये'' राजा ने दोनों को हितबोध किया।

तब मारीच ने बताया ''ग़लतियाँ दोनों से हुईं। अपनी ग़लती मैं सुधार लूँगा। आगे से ऐसा होने नहीं दूँगा।''

सुबाहु ने भी वही बात बतायी। तब राजा ने और चार साालों तक मारीच को ही ग्रामाधिकारी नियुक्त किया और चला गया।

राजधानी पहुँचने के बाद विषय जानकर मंत्री ने, राजा चंद्रसेन से कहा ''प्रभु, जब

आपने उसे ग्रामाधिकारी बनने पर मजबूर किया, तो उसने लाचार होकर मान लिया। आपकी बात को वह टाल नहीं सका। उन दिनों मारीच से कोई ग़लती भी नहीं हुई। अब उसने ग़लती की। विलंब को आपने हटाया, क्योंकि उसने ग़लती की। किन्तु मारीच की ग़लती को आपने माफ़ कर दिया और चार सालों तक उसका पद-काल बढ़ाया। लोग शायद इस नियुक्ति पर उँगली उठायेंगे और आप पर आरोप लगायेंगे कि रिश्तेदार होने के कारण आपने पक्षपात किया। नागरिकों का यों समझने का ख़तरा तो है।''

मंत्री की बातों पर चंद्रसेन हँसा और कहा ''विलंब ने ग्रामीणों से बुरा सलूक़ किया। अधिकार का दुरुपयोग किया। अतः उसका अपराध क्षमा-योग्य नहीं। विलंब के दुष्प्रचार के कारण ऐरावत बदनाम हुआ। अधिकारी बनकर उस गाँव में जाने के लिए कोई भी तैयार नहीं था। मारीच को मैंने ज़बरदस्ती भेजा। मारीच क़ाबिल है। वहाँ की जनता का प्रेम-पात्र बना। गाँव को भी अच्छा नाम मिला। इस कारण, पहले जिन-जिन्होंने वहाँ जाने से इनकार किया, अब वे वहाँ जाने के लिए तरस रहे हैं। चूंकि इतने उम्मीदवार हैं, इसलिए मैं चाहता था कि उसका पद-काल बढ़ाऊँ। किन्तु मारीच बड़ा होशियार है। असली विषय की तह में जाकर उसने बड़ी चतुराई से गाँव में अनावश्यक झगड़े पैदा किये। ऐरावत में पक्ष-विपक्ष दल बने। इस कारण अब फिर से कोई भी ऐरावत जाना नहीं चाहता। अब मारीच का कोई मुक़ाबला नहीं। मेरा तो अनुमान है कि इस योजना में सुबाहू का भी हाथ है और उसने मारीच का साथ दिया। जो भी हो, अब मैं जान गया हूँ कि चार सालों की अवधि का नियम अटपटा व खोखला है। अविवेकी, असमर्थ अधिकारी चार साल क्यों, चार हफ़्ते भी अधिकार चला नहीं सकता। वह उस पद के लायक़ नहीं है। जनता की भलाई करनेवाला अधिकारी चार साल क्यों, जीवन भर ले लिए अधिकारी बने रहने की योग्यता रखता है।''

मंत्री ने राजा की प्रशंसा करते हुए कहा ''प्रभु, मेरे सब संदेह दूर हो गये। मुझे तो लगता है कि मारीच और सुबाहु से अधिक आप ही चतुर हैं।''

लक्ष्मी की कृपा

मथुरा नगर में राघव नामक एक ब्राह्मण युवक था। उसके अपने कोई नहीं थे। वह महा दरिद्र था, किन्तु उसने कभी भी अपने हाथ फैलाकर किसी से कुछ नहीं माँगा। वह गाँव के वैष्णव मंदिर के पास ही रहा करता था। मंदिर के देवताओं की भक्तिपूर्वक पूजा करता और भक्तों से जो प्रसाद मिलता, खाकर अपना पेट भरता था। देखने में वह स्वस्थ, बलिष्ठ व सुंदर लगता था।

एक दिन उसे सपने में लक्ष्मी देवी दिखायी पड़ीं और कहा "पुत्र, तुम पर मेरी कृपा-दृष्टि पड़ी है। अब से मैं तेरे ही साथ रहूँगी और तुझे समस्त ऐश्वर्य प्रदान करूँगी।"

राघव ने देवी को नमस्कार करके कहा "माते, आपकी कृपा-दृष्टि मुझ पर पड़ी है, इसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। अब तक आपकी मुझ पर दया नहीं रही, इसीलिए निश्चिंत जीवन बिताता आ रहा हूँ। मुझे किसी की चिंता नहीं। भक्त जो देते हैं, उसे खाकर अपना पेट भर रहा हूँ। अपनी जीविका गुज़ार रहा हूँ। अतः मुझे आपकी आवश्यकता नहीं है। आपको शत नमस्कार। मुझे अकेले ही आराम से रहने दीजिये।"

लक्ष्मी देवी नाराज़ होकर बोलीं "मूर्ख, ललाट रेखाएँ इतनी आसानी से थोड़े ही मिटती हैं? मैं तुम्हारे ही साथ रहूँगी।"

"माते, एक छोटी-सी विनती है। सिर्फ़ इतना बता देना कि मुझे छोड़कर कब चली जाओगी? बस, इतना बता देना काफ़ी है।" राघव ने कहा।

"हाँ, हाँ, मैं बताके ही जाऊँगी" कहकर उसने उसके कान में कुछ बताया और वह अदृश्य हो गयी।

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

दूसरे दिन एक करोड़पति मंदिर में पूजा कराने के लिए बड़े ठाठ-बाट से आया। उसने राघव को देखा। उसे देखकर पता नहीं, उसे क्या लगा, नमस्कार किया। उसके गले में पुष्प-माला डाली और रेशमी कपड़े पहनाये। उस करोड़पति के साथ साथ आये सब लोगों ने भी उसके गले में पुष्प-मालाएँ डालीं। पूजा के बाद गरीबों को अन्न-दान किया। राघव को भी बढ़िया खाना खिलाया। अब तक राघव भगवान का प्रसाद ही खाता रहा। अब वह समझ गया कि लक्ष्मी देवी ने अपना काम करना शुरु कर दिया।

आधी रात तक करोड़पति के घर में पूजा-पाठ, भजन आदि होते रहे। तब तक राघव करोड़पति का बंदी ही बना रहा। जैसे ही उसे मुक्ति मिल गयी, उसने लक्ष्मी देवी से छुटकारा पाना चाहा। वह सीधे राजा के क़िले में गया। तिलक लगाये रेशमी वस्त्र पहने, गले में फूलों की मालाएँ डाले, सुँदर दिखनेवाले राघव को देखकर पहरेदारों को लगा, मानों विष्णु भगवान ही भूमि पर उतर आये। इसलिए किसी ने भी उसे रोकने का साहस नहीं किया।

बिना किसी रुकावट के राघव सीधे राजभवन में गया। बहुत कमरों को पार करने के बाद राजा के शयन-कक्ष में पहुँचा। एक पलंग पर रानी और उससे थोडी दूर पर के पलंग पर राजा सो रहे थे। राघव ने, रानी का हाथ पकड़ा और रानी को ज़ोर से खींचा। रानी एकदम चिल्ला पड़ी। राजा उठ बैठा। राजा ने देखा कि कोई रानी को पलंग से खींच रहा है। राजा ने गुस्से से अपने तकिये के नीचे से तलवार खींची। इतने में रानी के पलंग पर लंबा विषैला सर्प आ गिरा। राजा की तलवार उसे काटने के काम आयी।

"हमारे प्राणों की रक्षा के लिए इस आधी रात को अवतरित महाविष्णु लग रहे हैं आप। आप कौन हैं?" राजा ने सविनय राघव से पूछा।

"मेरा नाम राघव है।" उसने कहा। राजा को वह बहुत अच्छा लगा। उसमें राघव के प्रति श्रद्धा-भावना उत्पन्न हुई। राजधानी में ही उसने, उसके लिए एक महल दिलवाया। फिर राघव से प्रार्थना की कि उस महल में रहकर हमें कृतार्थ कीजिये। राघव को लगा कि लक्ष्मी देवी

का सामना करने की शक्ति उसमें नहीं है, तो उसने राजा की प्रार्थना मान ली ।

अब राघव का सितारा चमकने लगा। राजा के आदर-सत्कार के साथ-साथ उसे राजपरिवार के सब लोगों का आदर प्राप्त होने लगा । हर दिन उसे अनगिनत भेंटें मिलने लगीं । किसी ने लक्ष्मी देवी जैसी एक सुंदर कन्या से उसका विवाह भी कराया । राघव अब चार बच्चों का बाप है ।

राघव ने लक्ष्मी देवी के लिए लोहे के एक बहुत बड़े संदूक का भी इंतज़ाम किया । लक्ष्मी देवी उसके अंदर कराहती रहती थी । यों बारह साल गुज़र गये ।

गुरुवार के दिन राघव की पत्नी सीढ़ियों से उतरती हुई चिल्लाती बोली "कहीं प्रकाश ही नहीं है, दीप नहीं जलाया? कहाँ मर गये सब लोग ।" लक्ष्मीदेवी का उसके कानों में बताया चिह्न यही था । अब वह जान गया कि लक्ष्मी उसे छोड़कर जा रही है ।

मन ही मन राघव ने लक्ष्मी देवी को प्रणाम किया और कहा "माँ, मुझे छोड़कर जा रही हो । जाओ, जाओ ।" फिर उसने अपनी पत्नी से कहा "मुझसे कुछ मत पूछो । लोहे के संदूक में जो भी पड़ा है, लो और अपनी संतान को लेकर मायके चली जाओ ।" उसने उसी रात को उन्हें भेज दिया ।

राजा जब कभी भी शिकार करने जाता, राघव को भी अपने साथ ले जाता था । पत्नी और बच्चों को भेजने के दूसरे ही दिन राघव को राजा शिकार पर ले गया । दुपहर तक राजा और दूसरे शिकारी, शिकार करते-करते थक गये । धूप में राजा पेड़ के तले राघव की जाँघ पर अपना सिर रखकर सो गया । बाक़ी शिकारी भी पेड़ों की छाँव में लेट गये ।

पेड़ पर से अचानक एक कौवे ने राजा

के गले पर अपना मल छोड़ा। राजा मस्त सो रहा था, इसलिए वह नहीं जागा। राघव सोच में पड़ गया कि राजा का सिर हिलाये बिना यह मल कैसे निकालूँ। राजा की कमर में उसे एक चाकू दिखायी पड़ा। उससे वह राजा के गले पर का मल निकालने लगा। इतने में राजा ने आँखें खोलीं। अपने गले पर चाकू देखकर वह चिल्ला पड़ा। "द्रोही, द्रोही" कहते हुए बैठ गया। सिपाही तुरंत दौड़ते हुए वहाँ आये।

"मेरे ही आश्रय में रहकर मुझी को मारने का दुस्साहस करनेवाले इस द्रोही को क़ैद कीजिये" राजा ने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी।

राघव के हाथ बाँधकर सिपाही उसे राजधानी ले आये। दूसरे दिन राजसभा में राघव पर आरोप लगाया गया कि उसने राजद्रोह किया है और उससे पूछा गया कि बोलो, क्या कहना है तुम्हें?

"मुझे कुछ नहीं बताना है। आप जो सज़ा देना चाहते हैं, दीजिये।" राघव ने कहा।

"तुम्हें फाँसी की सज़ा दे रहा हूँ। कहो, तुम्हारी आख़िरी ख्वाहिश क्या है? हम पूरी करेंगे।" राजा ने कहा।

"मेरे लोहे के बड़े संदूक में छोटा-सा संदूकचा है। एक बार मुझे दिखाइये और फाँसी पर लटका दीजिये। उसमें मेरी संपदा है।" राघव ने कहा।

राजकर्मचारी गये और संदूक खोला तो उसमें कुछ नहीं पाया। उसमें छोटा-सा जो संदूकचा था, लाया गया और राजसभा में सबों के सामने खोला गया। उसमें गेरुवें रंग की एक धोती थी और छोटा-सा एक लोटा था।

"यही क्या तुम्हारी संपदा है?" राजा ने पूछा।

"हाँ महाराज, जब तक इनका विश्वास किया, कष्टों से दूर था। बाद मुझपर लक्ष्मी देवी की कृपा हुई। मैं जानता था कि वह शाश्वत नहीं है और किसी भी क्षण मैं इस स्थिति में पहुँच सकता हूँ, इसीलिए मैंने इन्हें सुरक्षित रखा। मुझे अगर ये दिला दें तो मैं कहीं चला जाऊँगा।"

राजा ने उसकी असली कहानी सुनकर उसे जाने दिया।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, नवम्बर, १९९६ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

S.G. Seshagiri

Mahantesh C. Morabad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० सितम्बर, '९६ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

जुलाई, १९९६, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **जीविका की यह डोर**

दूसरा फोटो : **चली मैं आसमाँ की ओर**

प्रेषक : **कु. आशा सिंग**

C/o. एम.पी. सिंग, अरविन्द नगर, मधुपटना, कटक - १० (ओरिसा)

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process private Ltd., 188, N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA (Hindi) September 1996 Regd. No. M, 5452